आयाम

द्वितीय अंक, 2017-18

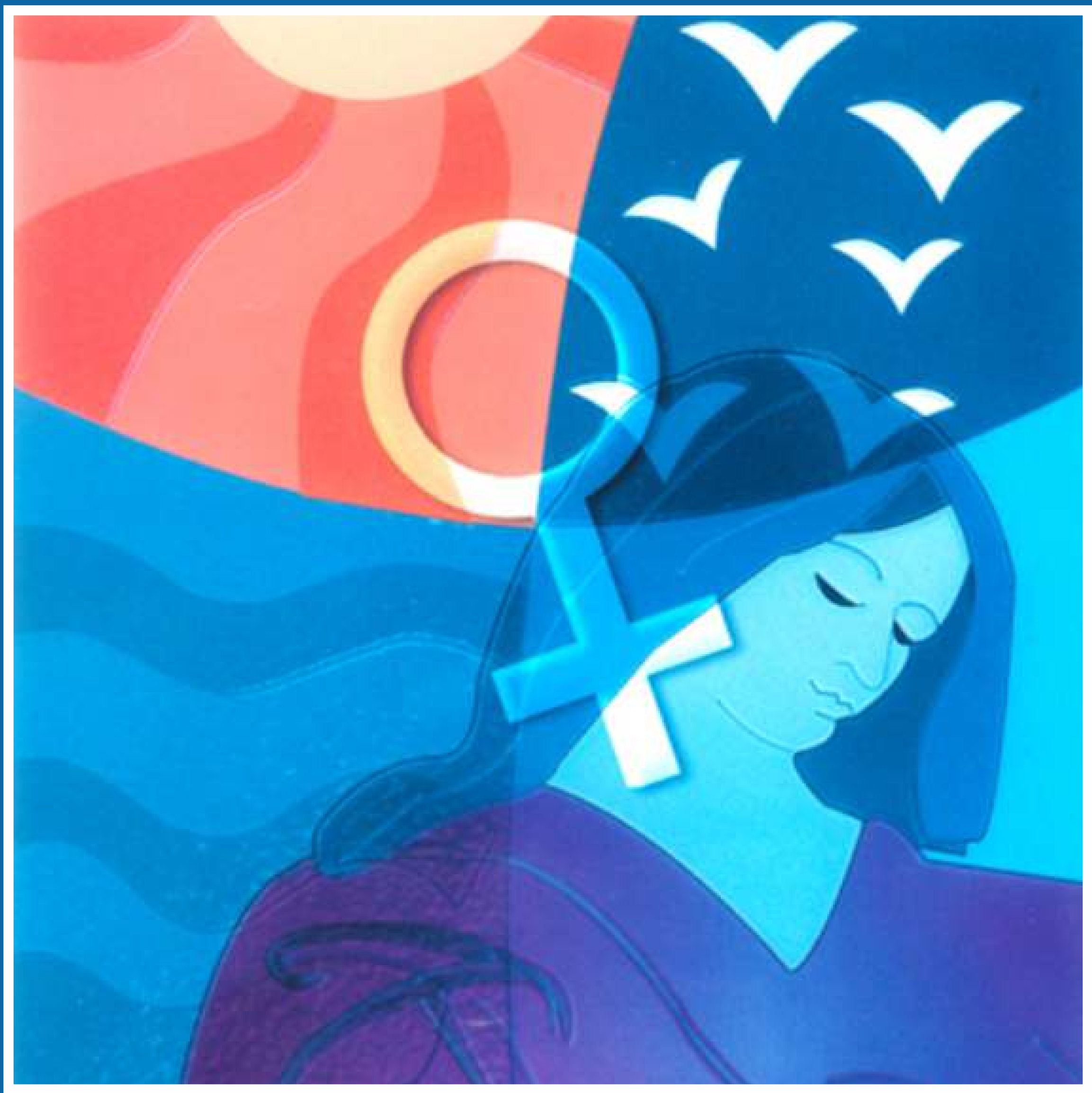

हिन्दी विभाग

कमला नेहरू कॉलेज

दिल्ली विश्वविद्यालय

KAMALA NEHRU COLLEGE

सलाहकार :

डॉ भारती
असिस्टेंट प्रोफेसर
हिन्दी विभाग

छात्रा सम्पादन मण्डल

पूजा राय, छठा सत्र – संपादक
प्रीति, छठा सत्र – सह संपादक
आफरीन, छठा सत्र
प्रकृति पाठक, चौथा सत्र

अनुक्रमणिका

1. प्राचार्या का संदेश 1
2. हिन्दी विभाग के वर्तमान प्राध्यापक/प्राध्यापिकाएँ 2
3. हिन्दी साहित्य परिषद की छात्रा सदस्य और वर्तमान कक्षा प्रतिनिधि 3
4. सम्पादकीय 4
5. हिन्दी विभाग की वार्षिक रिपोर्ट 5–7
6. राष्ट्रीय संगोष्ठी की कुछ तस्वीरें 8–9
7. राष्ट्रीय संगोष्ठी – रिपोर्ट 10–11
8. विश्व पुस्तक मेले की रिपोर्ट 12–13
9. कार्यशाला – रिपोर्ट 14
10. लेख–
    - क. अधर्म की आड़ में 15
    - ख. मीडिया का सच 16
    - ग. कुंठित नजरिया और एक लड़की 17–18
11. कहानी–
    - क. मूर्ख शेर 19
    - ख. दीपा की दीपावली 20–21
    - ग. वो चिड़िया हैं 22
12. समीक्षा–
    - क. फिल्मरिव्यु (लिपस्टिक अंडर माई बुरका) 23–24
    - ख. रोज वाली स्त्री (सपना चमडिया) 25–26
    - ग. यही कहीं था घर (सुधा अरोड़ा) 27–28
13. साक्षात्कार –
    - क. संजय जोशी 29
    - ख. अमर नाथ अमर 30–32
    - ग. डॉ रविकांत 33–34
14. संस्मरण
    - क. कुशीनगर का संस्मरण 35
15. व्यक्तिगत अनुभव
    - क. एक फिल्म का अनुभव 36–37
    - ख. विश्व पुस्तक मेला (एक अनुभव) 38
    - ग. स्त्री होने का अनुभव 39
16. कविताएँ
    1. वक्त नहीं 40
    2. पहला दिन 40
    3. मैंने खुबसूरती को देखा 41–42
    4. माँ, रबड़ 42
    5. अजनबी 43
    6. तेरी गुनहगार 44
    7. रोक लूँगी 45
    8. अच्छा होता पर हुआ नहीं 45
    9. आधुनिक नारी और माँ 46
    10. बचपन 46
    11. वक्त 47
    12. सुख–दुख 47
    13. क्या होती हैं दोस्ती? 48
    14. बचपन 48
    15. वो रात 49
    16. टूट के ना गिर जाऊँ 49
    17. बुरखे से झाँकती आँखे 50–51
    18. अंध भक्ति और सामाजिक बुराई 52
    19. जान लो के कौन हो तुम 53
17. रोचक तथ्य 53
18. मन के हारे हार है... मन के जीते जीत 54
19. वार्षिक गतिविधियों की कुछ झलकियाँ 55–56
20. उपलब्धियाँ 57

प्राचार्या की कलम से ....

कई बार ऐसा कहा जाता है– ''जिस घर में बेटी नहीं होती उसमें रौनक नहीं होती''। आज के सुशिक्षित वर्ग में एक ऐसी जागरूकता आ रही है जिससे समाज में सदियों से जन्म से ही अनचाही मानी जाने वाली बेटियों को आज लोग बड़े मनोरथों से पाल रहे हैं। वे चाँद के जैसे कला–दर–कला बढ़ती हुई बेटी को देखकर निहाल होते हैं। हालाँकि यह रूझान आज बड़े शहरों के सुशिक्षित वर्ग तक ही सीमित है लेकिन जन–संप्रेषण के विविध माध्यमों से इस भावना को सुदूर अंचलों तक भी पहुँचाया जा रहा है। ''बेटी पढ़ाओ, बेटी बचाओ'' के संदेश ने निस्सन्देह आज समाज पर एक अनुकूल प्रभाव डाला है। जिस समाज में बेटियाँ आगे बढ़ेंगी उसमे हर परिवार समय के साथ कदम मिलाकर तरक्की करेगा, और देश तरक्की करेगा। आज का युवा वर्ग अगर इसका संकल्प ले ले तो एक पीढ़ी ही इसे आंदोलन का रूप देने के लिए पर्याप्त है। वहाँ तक पहुँचने के लिए अभी एक पीढ़ी का फासला बाकी है। उस फासले को तय करके, बेटियों का होना भाग्यशाली माना जाएगा, और हर बेटी के जन्म पर खुशी मनाई जाएगी।

डॉ. कल्पना भाकुनी

हिन्दी विभाग के प्राध्यापक/प्राध्यापिकाएँ

1. डॉ रजत रानी आर्य
2. डॉ कांति देवी मीना
3. डॉ सुषमा सहरावत (प्रभारी, हिन्दी विभाग)
4. डॉ संगीता वर्मा
5. डॉ भारती
6. डॉ मोहम्मद इसराइल
7. डॉ साधना अग्रवाल
8. डॉ मनोज कुमार
9. डॉ सीमा माहेश्वरी
10. डॉ कुमारी अनीता
11. डॉ दीनदयाल
12. डॉ अनुराधा गुप्ता
13. डॉ नीरू कुमारी
14. डॉ प्रियंका

हिंदी साहित्य परिषद्
वर्तमान छात्रा सदस्य: 2017–18

अध्यक्ष–प्रीति
हिंदी विशेष (षष्ठ सत्र) अनुभाग (ख) 9643886421

उपाध्यक्ष – पूजा राय
हिंदी विशेष (षष्ठ सत्र) अनुभाग (ख) 8178985774

सचिव – जंयती लोहिया
हिंदी विशेष (चतुर्थ सत्र) 9711029860

उपसचिव –पायल
हिंदी विशेष (चतुर्थ सत्र) 8527200726

मंत्री –मंजरी
हिंदी विशेष (चतुर्थ सत्र) 9811094198

उप मंत्री –शिखा शुक्ला
हिंदी विशेष (द्वितीय सत्र) 7355983894

वर्तमान कक्षा प्रतिनिधि (बी. ए. हिंदी, विशेष)

षष्ठ सत्र	जयंती लाहिया (7011388589)
	पायल (8527200726)
चतुर्थ सत्र	प्रीति (9643886421)
	निशा (9818892206)
द्वितीय सत्र	मंजरी (9811094198)
	शिखा शुक्ला (7355983894)

संपादकीय

प्रिय पाठकगण,

गत् वर्ष 2017 से कमला नेहरू कॉलेज के हिन्दी विभाग द्वारा प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'आयाम' का द्वितीय संस्करण प्रकाशित होते हुए देख अत्यन्त हर्षानुभूति हो रही है। गत वर्ष 2017 से आपका सहयोग निरन्तर प्राप्त हो रहा है, इसके लिए मैं ह्रदय से आभार प्रकट करती हूँ एवं बधाई देती हूँ।

हमारे विभाग की पत्रिका 'आयाम' अनेक प्रतिभाओं की अनुभूतियों, अभिव्यक्तियों, कल्पनाओं को संजोये समेटे आपके समक्ष प्रस्तुत है।

आज के वैज्ञानिक विकास ने मनुष्य को यन्त्रवत् बना दिया है। सत् साहित्य मनुष्य की चित्रवृत्तियों का शोधन कर मनुष्यता को विकसित करता है। साहित्य की इस स्थिति के परिपेक्ष्य में आज साहित्यकार का उत्तरदयित्व बढ़ गया है। इसी उत्तरदायित्व को अपने कन्धों पर लेते हुए कलियों ने अपने गूढ़ व सरल लेखों से अपने कर्त्तव्य को पूरा किया है। समाज के परिवेश का प्रभाव इन उभरते साहित्यकारों की रचनाओं पर पड़ा है। सत् साहित्य के सृजन और अनुशीलन की आवश्यकता का अनुभव हम प्रेक्षी व तरूण रचनाकारों ने किया है। उसी की अभिव्यक्ति साहित्य की विविध विद्याओं–काव्य, संस्मरण, कथा, आलोचना व अन्य गद्य रूपों के माध्यम से यहाँ प्रस्तुत की गई है।

अन्ततः मैं अपनी प्राधानाचार्या महोदया डॉ. कल्पना भाकुनी, विभाग प्रभारी डॉ. सुषमा सहरावत, डॉ भारती व विभाग के सभी प्राध्यापक व प्राध्यापिकाओं के प्रति आभार प्रकट करती हूँ जिनका सानिध्य, स्नेह, विशिष्ट मार्गदर्शन व अभिप्रेरणा मुझे प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप में प्राप्त होते रहता है तथा जिन्होंने नव पल्लवों को अपनी प्रतिभा उजागर करने का सुअवसर प्रदान किया। मैं उन सभी छात्रा सहपाठियों का तहे दिल से धन्यवाद करती हूँ जिनका इस कार्य में विशेष उत्साहवर्धन सहयोग व सद्भाव मिला।

धन्यवाद

पूजा राय
छात्रा संपादिका
तृतीय वर्ष
(हिन्दी विभाग)

हिंदी विभाग वार्षिक रिपोर्ट

(जनवरी 2017 –दिसंबर 2017)

14 जनवरी 2017 को हिंदी विभाग की तृतीय वर्ष की 28 छात्राओं का 04 शिक्षकगणों का 32 सदस्ययी दल प्रगति मैदान में चल रहे विश्व पुस्तक मेले(07 -15 जनवरी 2017) में भ्रमण कर ज्ञानार्जन हेतु पहुंचा | पूर्वाह्न 10 :30 बजे कॉलेज से प्रस्थान करने के उपरांत 11 :30 बजे संपूर्ण दल मेले में पहुंचा तथा 5:00 बजे मेला भ्रमण कर समस्त छात्राओं सहित सकुशल वापिस लौटा | मेल में छात्राओं ने विभिन्न स्टालों से विविध विषयों की पुस्तकें खरीदीं तथा वहां चल रहे विभिन्न कार्यक्रमों में आये कुछ प्रख्यात साहित्यकारों से चर्चा भी की | इस मेले में छात्राओं के साथ विभाग के शिक्षक डॉ. रजत रानी आर्य ,डॉ. सुषमा सहरावत ,डॉ. कुमारी अनीता तथा डॉ. मनोज कुमार सम्मिलित हुए|

24 जनवरी 2017 को हिंदी विभाग द्वारा एक दिवसीय अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी का सफल आयोजन किया गया |संगोष्ठी का विषय था –'अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य में हिंदी साहित्य'| संगोष्ठी का प्रारंभ दीप –प्रज्वलन से हुआ | हिंदी विभाग की वरिष्ठ प्राध्यापिका डॉ. रजत रानी आर्य द्वारा आमंत्रित वक्ताओं के परिचय देने के उपरांत अतिथि वक्ताओं का उपहार आदि भेंट कर विधिवत सम्मान किया गया | प्रथम सत्र का सञ्चालन डॉ.संगीता वर्मा ने किया | प्राचार्य डॉ. कल्पना भाकुनी ने अपने स्वागत भाषण में हिंदी को अंतर्राष्ट्रीय भाषा बनाने में हिंदी साहित्यकारों की भूमिका का उल्लेख किया | उन्होंने हिंदी साहित्य के अंतर्राष्ट्रीय स्वरुप को 'मेड इन इंडिया ब्रांड' से जोड़ा | लन्दन से आये प्रवासी साहित्यकार श्री तेजेंद्र शर्मा ने अपने वक्तव्य में प्रवासी साहित्यकारों को मुख्यधारा में न जोड़े जाने पर नाराज़गी जताई | उन्होंने प्रवासी साहित्य के बदलते हुए मानवीय मूल्यों की चर्चा की और अपने कथा साहित्य से अनेक ज्वलंत प्रसंगों को रखा | अमेरिका से आयी प्रवासी लेखिका डॉ. सुषम बेदी ने अमेरिकी समाज में प्रवासी साहित्यकारों की पहचान की पीड़ा को व्यक्त किया | उन्होंने अपने उपन्यासों के माध्यम से अमेरिकी समाज में व्याप्त सांस्कृतिक मूल्यों ,लोकतान्त्रिक व्यवस्था तथा नागरिक समाज की स्त्री –नज़रिये से व्याख्या की | तीसरे वक्ता के रूप में युवा कथाकार अवं आलोचक डॉ. हरीश अरोड़ा ने कहा कि प्रवासी साहित्यकार विदेश में रहकर भारतीय संस्कृति को अपनी रचनाओं में व्यक्त करते हैं | उन्होंने प्रवासी साहित्य के पीढ़ीगत द्वंद्व को प्रस्तुत किया तथा मॉरिशस, सूरीनाम ,फिजी ,गुयाना आदि देशों में रहकर हिंदी में साहित्य रच रहे द्वितीय पीढ़ी के रचनाकारों के विचार, मुद्दे एवं द्वंद्व के नयेपन पर प्रकाश डाला | द्वितीय सत्र का सञ्चालन डॉ. मनोज कुमार ने किया | इस सत्र में संगोष्ठी में शामिल प्रतिभागियों ने अपने-अपने शोध –पत्रों को प्रस्तुत किया | तत्पश्चात प्रमाण –पत्र वितरण किया गया | अंत में इस संगोष्ठी की संयोजिका और विभाग प्रभारी डॉ. सुषमा सहरावत द्वारा धन्यवाद ज्ञापन के साथ संगोष्ठी का समापन हुआ|

17 फ़रवरी 2017 को हिंदी विभाग द्वारा रचनात्मक लेखन पर एक कार्यशाला का आयोजन किया गया | सुप्रसिद्ध मीडियाकर्मी , जानकीपुल.कॉम के संस्थापक और ब्लॉगर डॉ. प्रभात रंजन ने छात्राओं की रचनात्मकता को उभारने के लिए नये आयामों पर प्रकाश डाला | उन्होंने बताया कि डेलीहंट , ब्लागस्पॉट . कॉम आदि डिजिटल माध्यमों द्वारा अपनी रचनात्मकता को किस तरह जल्द और प्रभावी ढंग से लोगों तक पहुँचाया जा सकता है | कार्यशाला अत्यंत सफल रही | इसमें छात्राओं ने बढ़ –चढ़कर हिस्सा लिया और अनेक प्रश्न पूछकर अपनी जिज्ञासाओं का समाधान किया|

22 फरवरी 2017 को हिंदी साहित्य उत्सव के अंतर्गत हिंदी साहित्य परिषद्,सृजन और अभिव्यक्ति के संयुक्त तत्वावधान में अन्तरमहाविद्यालय मौलिक कविता

पाठ तथा वाद –विवाद प्रतियोगिता का आयोजन किया गया | दिल्ली विश्वविद्यालय के अनेक कॉलेज के प्रतिभागियों ने इसमें प्रतिभागिता दर्ज की| वाद –विवाद प्रतियोगिता के निर्णायक मंडलमें थे -प्रमुख समाचार पत्र अमर उजाला से श्री कल्लोल चक्रबर्ती एवं जामिया मिलिया विश्वविद्यालय से डॉ. कहकशां साद। इस प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया कोमल उपाध्याय (मनोविज्ञान विशेष , तृतीय वर्ष, कमला नेहरू कॉलेज बी. ए. (प्रोग्राम) की छात्रा पूजा ने| द्वितीय तथा तृतीय पुरस्कार क्रमशः प्राप्त किए – सफा सलीम (बीएस .सी द्वितीय वर्ष, श्री अरबिंदो कॉलेज) तथा ओम आनंद (भूगोल विशेष , प्रथम वर्ष , शहीद भगत सिंह कॉलेज) सांत्वना पुरस्कार सुप्रिया (बी .कॉम .पास ,प्रथम वर्ष ,गार्गी कॉलेज) तथा प्रिंस कुमार (राजनीति विज्ञान विशेष ,द्वितीय वर्ष) को दिए गए । चल वैजयंती मिरांडा हाउस कॉलेज की हिंदी विशेष प्रथम वर्ष की छात्राओं ऋचा मिश्रा और प्रियंका ने प्राप्त की |मौलिक कविता पाठप्रतियोगिता के निर्णायक मंडल में थे – हिन्दू कॉलेज ,दिल्ली विश्वविद्यालय से डॉ.पल्लव तथा प्रसिद्ध कवि श्री दीपक गुप्ता जी |इस प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार प्राप्त कियाराखी (गार्गी कॉलेज) ।द्वितीय तथा तृतीय पुरस्कार क्रमशः आफरीन (कमला नेहरू कॉलेज) तथा पूजा शाह (शहीद भगत सिंह कॉलेज) ने प्राप्त किए। प्रोत्साहन पुरस्कार प्रार्थना (गार्गी कॉलेज) तथा मेधा मित्तल (दिल्ली कॉलेज ऑफ़ आर्ट एंड कॉमर्स) को दिए गए । चल वैजयंती गार्गी कॉलेज की छात्राओं राखी और प्रार्थना ने प्राप्त की |

हिंदी साहित्य परिषद् द्वारा 6 अप्रैल 2017 को नाटक प्रतियोगिता का आयोजन किया गया| तीनों वर्ष की छात्राओं ने अपनी-अपनी मौलिक प्रस्तुतियां दीं जो बहुत ही बढ़िया रही | इनमें सर्वश्रेष्ठ नाटक का पुरस्कार द्वितीय वर्ष की छात्राओं द्वारा प्रस्तुत नाटक 'एसिड अटैक' को मिला | सर्वश्रेष्ठ निर्देशक का पुरस्कार जयंती लोहिया , प्रथम वर्ष की छात्रा ने 'सामाजिक जागरूकता' नाटक के लिए प्राप्त किया | सर्वश्रेष्ठ पटकथा लेखन का पुरस्कार ज्योति (786) को 'निष्पक्ष नेता चुनना' के लिए दिया गया | सर्वश्रेष्ठ अभिनय के लिए दो छात्राओं ने पुरस्कार प्राप्त किये- रामभतेरी (द्वितीय वर्ष) तथा पिंकी (तृतीय वर्ष)

24 अप्रैल 2017 को हिंदी साहित्य परिषद् द्वारा पुरस्कार वितरण तथा समापन समारोह का आयोजन किया गया |इस अवसर पर विभाग की प्रतिभाशाली छात्राओ को पुरस्कार प्रदान किए गए | समापन समारोह के अंत में हिन्दी विभाग की प्रभारी डॉ. सुषमा सहरावत ने छात्राओं को वार्षिक गतिविधियों से अवगत कराया तथा छात्राओं को आशीर्वचन देकर भविष्य में आगे बढ़ते रहने के लिए प्रेरित किया | इसी के साथ 'हिन्दी साहित्य परिषद्' के समारोह का समापन हुआ|

20 जुलाई को दिल्ली विश्वविद्यालय के कमला नेहरु कॉलेज के 2017-2018 के सत्र का आरम्भ हुआ| इस नए सत्र में हिन्दी विभाग में प्रथम वर्ष के सेमेस्टर के लिए कुल 47 छात्राओं का नामांकन हुआ|

हिंदी विभाग की छात्राओं का वार्षिक परिणाम अच्छा रहा| तृतीय वर्ष में 69 छात्राओं में से 58 प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुईं| सर्वाधिक अंक (77.35%) वारिजा चौधरीने प्राप्त किये| द्वितीय वर्ष में 40 छात्राओं में से 32प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुईं| सर्वाधिक अंक (7.70%)रामभतेरी ने प्राप्त किये| प्रथम वर्ष में 54 छात्राओं में से 44प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुईं| सर्वाधिक अंक (8.36%) किरण कुमारी और निहारिका उपाध्याय ने प्राप्त किये|

हिंदी विभाग द्वारा 29 अगस्त 2017 को हिंदी साहित्य परिषद् के उदघाटन समारोह के अंतर्गत तुलसी जयंती मनाई गई |कार्यक्रम का शुभारम्भ दीप प्रज्वलन तथा तुलसी जी के चित्र पर माल्यार्पण कर रामचरित मानस के दो भजनों के गायन से हुआ| इसमें माननीय वक्ता के रूप में डॉ. विनोद तिवारी आमंत्रित थे जिन्होंने 'तुलसी के काव्य में लोकमंगल' विषय पर प्रभावी वक्तव्य देकर सभी श्रोताओं को लाभान्वित किया | इस अवसर पर विभाग की छात्रों ने डॉ.मनोज कुमार के निर्देशन में मौलिक नाटक 'सीता अग्निपरीक्षा

नहीं देगी' का सफल मंचन किया जो अत्यंत प्रभावशाली रहा |

हिंदी विभाग द्वारा 13 नवम्बर 2017 को 'हिंदी साहित्य और सिनेमा का अंतर्संबंध' विषय पर एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठीका सफल आयोजन किया गया | संगोष्ठी का प्रारंभ दीप –प्रज्वलन से हुआ | संगोष्ठी के उद्घाटन एवं प्रथम सत्र 'सिनेमा और साहित्य' में प्रख्यात मीडिया एवं सिनेमा विशेषज्ञ श्री रविकांत जी नेबीज वक्तव्यसे सभी को लाभान्वित किया | इसमें मुख्य अतिथि के रूप में जनसत्ता समाचार पत्र के संपादक श्री मुकेश भारद्वाज जी उपस्थित थे | इस सत्र की अध्यक्षता प्रख्यात लेखक-विचारक तथा पद्मश्री सम्मान से सम्मानित श्री नरेंद्र कोहली जी ने की| संगोष्ठी के द्वितीय सत्र के विषय थे – 'समकालीन सिनेमा में स्त्री की बदलती छवि' तथा 'हिंदी साहित्य और सिनेमा में शोषित वर्ग'| इस सत्र में मुख्य वक्ताओं के रूप में उपस्थित थे –प्रख्यात सिनेमा अध्येता एवं निर्माता श्री संजय जोशी जी तथा सुप्रसिद्ध मीडिया विश्लेषक डॉ. अमरनाथ अमर जी | इस सत्र की अध्यक्षता पी. जी.डी. ए.वी.कॉलेज (सांध्य) दिल्ली विश्वविद्यालय के प्राध्यापक डॉ. हरीश अरोड़ा ने की |संगोष्ठी के तृतीय सत्र के विषय थे – 'साहित्य और सिनेमा में सामाजिक यथार्थ ' तथा 'हिंदी साहित्य और सिनेमा में बदलती भाषा | इस सत्र में मुख्य वक्ताओं के रूप में उपस्थित थे –हिंदी विभाग, बुंदलखंड विश्वविद्यालय से आये डॉ. पुनीत बिसारिया तथा सत्यवती कॉलेज,दिल्ली विश्वविद्यालय की प्राध्यापिका डॉ. रचना बिमल | इस सत्र की अध्यक्षता प्रख्यात सिनेमा विश्लेषक डॉ. लक्ष्मी शंकर बाजपई ने की | तत्पश्चात चयनित प्रपत्रों का वाचन विभिन्न प्रतिभागियों द्वारा किया गया और उसके बाद प्रमाण – पत्र वितरण किया गया | अंत में इस संगोष्ठी की संयोजिका एवं प्रभारी डॉ. सुषमा सहरावत द्वारा धन्यवाद ज्ञापन के साथ संगोष्ठी का समापन हुआ |

13 नवम्बर 2018 को "हिंदी साहित्य और सिनेमा का अंतर्संबंध"
विषय पर आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी की कुछ तस्वीरें...

राष्ट्रीय संगोष्ठी

हिन्दी साहित्य और सिनेमा का अन्तर्सम्बन्ध
दिनाँक 13 नवम्बर 2017 स्थान-नव संगोष्ठी कक्ष

13 नवम्बर 2017 को कमला नेहरू कॉलेज के हिन्दी विभाग द्वारा R.K. Institute के सहयोग से 'हिन्दी साहित्य और सिनेमा का अंतर्सम्बन्ध' विषय पर एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। कार्यक्रम का शुभारम्भ हिंदी विभाग की प्रभारी डॉ. सुषमा सहरावत के स्वागत वक्तव्य और दीप प्रज्जवलन के द्वारा हुआ। दीप प्रज्जवलन में प्राचार्या डॉ. कल्पना भाकुनी, पद्मश्री से सम्मानित श्री नरेन्द्र कोहली, श्री मुकेश भारद्वाज, श्री रविकांत भी सम्मिलित थे। दीप प्रज्जवलन के बाद विभाग की छात्राओं द्वारा प्रस्तुत सरस्वती वन्दना से समस्त सभागार गुंजित हो उठा। तत्पश्चात प्रथम सत्र का प्रारम्भ माननीय अतिथि गण के परिचय और उनको शॉल भेंट से सम्मानित करके किया गया।

प्रथम सत्र का संचालन डॉ. सुषमा सहरावत तथा डॉ. कुमारी अनीता द्वारा किया गया। प्रथम सत्र का विषय 'सिनेमा और साहित्य' था। बीज वक्तव्य प्रख्यात मीडिया एवं सिनेमा विशेषज्ञ श्री रविकांत जी ने दिया। इन्होंने कहा, ''सिनेमा देखते समय हमारे पास यह आज़ादी नहीं है कि दिखाए गए चरित्र को हम अपने अनुसार समझ सकें परन्तु यदि बात साहित्य की हो तो वहाँ पर पाठक ही अपनी भावनाओं के सहारे उस चरित्र को मूर्त रूप देता है। सिनेमा एक पूरे समूह की देन होता है। जबकि साहित्य सिर्फ लेखक की कल्पना होती है।'' इसके अतिरिक्त उन्होंने अनेक महत्वपूर्ण उदाहरण के साथ सिनेमा और साहित्य के अंतर्सम्बंध को प्रदर्शित किया। इनका धन्यवाद करते हुए डॉ. अनीता ने कहा कि '' जो हमें सोने न दे और सोचने पर मजबूर कर दे वह सिनेमा और साहित्य है।'' मुख्य अतिथि के तौर पर उपस्थिति श्री मुकेश भारद्वाज जी (सम्पादक, जनसत्ता) को अपना वक्तव्य देने के लिए आमंत्रित किया गया। उन्होंने कहा कि जिस निज़ाम में रहना पड़ रहा है वहाँ बोलना मुमकिन नहीं है और पत्रकार होने के कारण शांत रहना मुश्किल है। उन्होंने कहा कि कला सिनेमा, सिनेमा की जनसत्ता है जबकि वाणिज्यिक सिनेमा जिसे आज की युवा पीढ़ी देख रही है वह सबसे ज्यादा बिकाऊ अखबार है। इन्होंने परिश्रमी सम्यता और हिन्दुस्तानी की तुलना करते हुए पहली फिल्म दादा साहब फाल्के द्वारा निर्देशित राजा हरिशचन्द्र से लेकर आज तक की फिल्मों का विश्लेषण किया। इस सत्र की अध्यक्षता प्रख्यात लेखक व विचारक डॉ. नरेन्द्र कोहली जी ने की। इन्होंने कहा कि, ''जिन पंक्तियों को गुनगुनाया जा सके वे कविता नहीं हो सकती और इस कविता के कवि फिल्म में चले जाएं तो यह कहना पूर्णता गलत होगा कि हिन्दी साहित्य सिनेमा में उतर गया है।'' इस तरह कोहली जी ने अपने महत्वपूर्ण वक्तव्य से सबको लाभान्वित किया। तदुपरांत सत्र् का समापन डॉ. रजत रानी के धन्यवाद ज्ञापन के साथ किया गया।

द्वितीय सत्र 'समकालीन सिनेमा में स्त्री की बदलती छवि' तथा हिन्दी साहित्य में शोषित वर्ग, विषय पर आधारित था, जिसकी अध्यक्षता डॉ. हरीश अरोड़ा (सहायक प्रवक्ता, हिन्दी विभाग, पी.जी. डी.ए.वी. सांध्य, दिल्ली विश्वविद्यालय) ने की। इसमें मुख्य वक्ता के तौर पर श्री संजय जोशी (प्रख्यात सिनेमा अध्येता एवं निर्माता) व डॉ. अमरनाथ 'अमर' (प्रख्यात मीडिया विश्लेषक) शामिल थे। इस सत्र का संचालन डॉ. भारती (सहायक प्रवक्ता, हिन्दी विभाग, कमला नेहरू कॉलेज) ने किया। सत्र का शुभारम्भ डॉ. सीमा माहेश्वरी और डॉ. साधना अग्रवाल ने अतिथियों को शॉल भेंट से किया। डॉ.

जोशी ने अपने वक्तव्य में पहले के सिनेमा की तकनीक और आज की सिनेमा तकनीक का बारीक तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया। उन्होंने समकालीन सिनेमा में स्त्री की बदलती छवि को 'सुपरमैन ऑफ मालेगाँव' फिल्म के माध्यम से और शोषित वर्ग को 'गिन्नी माही' के द्वारा समझाने का प्रयास किया। इन्होंने फ़िल्म की दलित कन्या का उदाहरण देते हुए कहा कि अब दलित, दलित होने से डरते नहीं और अब ये अपने वर्ग को आगे पहुंचा रहे हैं। गिन्नी माही ने भी यही काम किया। उसने अपने गाने का नाम भी 'चमार पॉप' रख दिया। डॉ. अमरनाथ ने कहा कि साहित्य हजारों वर्ष पुराना है जबकि सिनेमा 104 वर्ष। समय के साथ–साथ तकनीक बदलती गई और लोगो की मानसिकता और सिनेमा का सन्दर्भ बदला, नए विषय आए। समय के साथ–साथ सिनेमा का भी रूप परिवर्तित हुआ। विभिन्न कालखंडों में इसके समीकरण बदलने का समाज पर क्या प्रभाव पड़ा है, इसको अत्यंत बारीकी से समझाया है। डॉ. हरीश अरोड़ा ने अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में वैकल्पिक मीडिया की महत्ता बताई और कहा कि समाज को जिस विषय पर मार्गदर्शन की जरूरत है आज उसी बात पर चर्चा हो रही है। उनके महत्त्वपूर्ण वक्तव्य के साथ ही दूसरे सत्र का समापन हुआ। इस सत्र का धन्यवाद ज्ञापन डॉ. मो. इसराइल ने किया।

संगोष्ठी का तृतीय और अंतिम सत्र का विषय था 'साहित्य और सिनेमा में सामाजिक यथार्थ' व 'हिन्दी साहित्य और सिनेमा में बदलती भाषा'। इस सत्र की अध्यक्षता डॉ. लक्ष्मीशंकर वाजपेयी (प्रख्यात सिनेमा विश्लेषक) ने की तथा मुख्य वक्ता के तौर पर डॉ. पुनीत बिसारिया (हिन्दी विभाग, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय) और डॉ. रचना विमल (सत्यवती कॉलेज, दि.वि,) शामिल थे। इस सत्र का संचालन डॉ. संगीता वर्मा (हिन्दी विभाग, कमला नेहरू कॉलेज) के द्वारा किया गया। अतिथियों का स्वागत डॉ. दीनदयाल, डॉ. संगीता वर्मा और डॉ. मनोज कुमार ने किया। डॉ. विसारिया ने कहा कि साहित्य और सिनेमा का सम्बन्ध सास–बहू के सम्बन्ध की तरह अत्यंत रोचक है, जिसमें साहित्य ने खुद को यहाँ सास माना है और सिनेमा को बहू। इसके अतिरिक्त उन्होंने कई उदाहरणों के द्वारा विषय को बारीकी से स्पष्ट करने का प्रयास किया। डॉ. रचना विमल ने कहा कि, 'साहित्य और सिनेमा अपनी पटकथा के साथ एक–दूसरे से जुड़ते तो है, शब्द–बिम्ब में बदलते तो हैं परन्तु दोनो अलग–अलग विधा होने के कारण रेल की समानांतर पटरियों के समान कुछ दूरी तक चलते–चलते अगर संयोग हो जाए तो गन्तव्य तक भी पहुँच जाते हैं नहीं तो पटरी अपना–अपना मोड़ लेती है और साहित्यकार प्रेमचन्द की तरह वापस लौट आते हैं। डॉ. वाजपेयी ने अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में कहा कि पहले की फ़िल्में सोचने पर मजबूर कर देती थीं लेकिन आज फिल्मों की दशा ऐसी हो गई है कि दर्शक अपना दिमाग बाहर छोड़ कर आते हैं। सिनेमा की भाषा के सन्दर्भ में उन्होंने कहा कि हिन्दी सिनेमा की भाषा दरिद्र हो गयी है और हिन्दी फ़िल्में उसके साथ खिलवाड़ कर रही हैं।

तृतीय सत्र और संगोष्ठी का समापन डॉ. सुषमा सहरावत के धन्यवाद ज्ञापन द्वारा हुआ। इसी क्रम में संगोष्ठी में आए कई विद्वान साथियों ने आलेख पाठ किया। इस प्रकार कमला नेहरू कॉलेज के हिन्दी विभाग की प्रभारी और संगोष्ठी की संयोजिका डॉ. सुषमा सहरावत तथा समस्त हिन्दी विभाग के अथम परिश्रम से संगोष्ठी का सफल कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

विश्व पुस्तक मेला (6 जनवरी से 14 जनवरी 2018) रिपोर्ट

10 जनवरी (बुधवार) 2018 को 'कमला नेहरू कॉलेज' के हिन्दी विभाग की 27 छात्राओं तथा 4 प्राध्यापिकाओं का 31 सदस्य दल प्रगति मैदान में चल रहें 'विश्व पुस्तक मेले' में भ्रमण करने हेतु पहुँचा। प्रातःकाल 10:45 बजे कॉलेज से प्रस्थान करने के उपरान्त 11:45 बजे सम्पूर्ण दल मेले में पहुँचा तथा 5.00 बजे मेला भ्रमण कर समस्त छात्राओं सहित वापिस सकुशल लौटा। मेले में अनेक भाषाओं की पुस्तकों का समावेश था। इस मेले में छात्राओं के साथ हिन्दी विभाग के निम्न सदस्य सम्मिलित हुए थे। डॉ. रजत रानी मीनू आर्य, डॉ. सुषमा सहरावत, डॉ. कुमारी अनीता, डॉ. साधना अग्रवाल।

सभी छात्राएँ एव प्राध्यापिकाएँ कॉलेज से एक दल के रूप में मैट्रो से प्रगति मैदान पहुँचे। वहाँ की साज–सज्जा मनभावन थी जिसे देख हम सब आकर्षित हो रहे थे। वहां अनेक विषयों से सम्बधित ग्रंथ, साहित्यिक पुस्तकें, शब्द कोश, बाल–साहित्य पुस्तकें उपलब्ध थी। जिन्हें देख हम सभी उत्साहित हो रहे थे।

'विश्व पुस्तक मेला' शनिवार से प्रगति मैदान में प्रारम्भ हुआ। जलवायु पर्यावरण विषय पर लोगों को जागरूक करने के लिए इस बार मेले का थीम 'पर्यावरण और जलवायु परिवर्तन' रखा गया। इस विषय पर दुनियाभर में प्रकाशित 500 से अधिक श्रेष्ठ पुस्तकें वहां उपलब्ध थी। इसके अलावा साहित्यक, इतिहास, कला,–संस्कृति, दर्शनशास्त्र, समाजशास्त्र, ज्योतिष, आध्यात्म, बाल–साहित्य, खेल, व्यजंन समेत विभिन्न विषयों पर अनेक पुस्तकें प्रदर्शित की गई थी।

मेले में 40 देशो से 800 से अधिक प्रकाशन हिस्सा ले रहे थे। हॉल नं.–7 में यूरोपीय संघ के सदस्य देशों का विशेष मंडप बनाया गया था। मेले में भीम आधारित एक कैलेंडर का विमोचन भी किया गया था।
लेखक मंच पर जब हम पहुँचे तो वहाँ अपना सत्य, अपना उपन्यास 21वीं सदी में साहित्य के सामाजिक सरोकार'' विषय पर एक विशेष परिचर्चा का आयोजन किया जा रहा था।

हम लोग दृष्टि के The Vision के स्टॉल पर भी गए। यह काफी बडा स्टॉल था जिसमें UPSC, सामान्य ज्ञान, अद्यतन जानकारियों से परिपूर्ण अनेक उपयोगी पुस्तकें उपलब्ध थी। कुछ छात्राओं ने 'भारतीय संविधान' एवं 'राजव्यवस्था' तथा 'वार्षिक' नामक पुस्तकें 'दृष्टि पब्लिकेशन' से खरीदी।

आगे हमने संवाद प्रकाशन का स्टॉल देखा जहाँ सौंदर्य, संघर्ष एवं विज्ञान पर आधारित पुस्तकें वहाँ रखी थी। यश पब्लिकेशन द्वारा, प्रकाशित चर्चित लेखक 'राजीव रंजन प्रसाद जी' की महत्त्वपूर्ण पुस्तके वहाँ थीं। जिन्हें सभी छात्राएँ उत्साहपूर्ण देख रही थीं। 'प्रतियोगिता दर्पण' स्टॉल में विद्यार्थियों के लिए अनेक प्रतियोगिता सम्बन्धित पुस्तकें उपलब्ध थीं जिनसे विद्यार्थी अपने परीक्षा में सहायता पा सकते है। 'दिल्ली यूनिवर्सिटी' का स्टॉल भी वहाँ लगा हुआ था उसके साथ ही सटा हुआ स्टॉल 'किताबवाले' का था।

स्टॉल नं0–76–77 में 'हिन्दी बुक सेन्टर' की पुस्तकें उपलब्ध थी जिनमें कहानी संग्रह भी थे।

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत स्टॉल में देश के हर कोने के साहित्य को समेटने की कोशिश की गई थी। जैसेः— कन्नड़, गुजराती, माग्घी, भोजपुरी, मैथिली, उड़ियाँ, मराठी, पंजाबी इत्यादि भारतीय भाषाओं का साहित्य उपलब्ध था।

इस प्रकार विश्व पुस्तक मेले में हमने विविध प्रकार के धार्मिक, साहित्यिक, शैक्षिक साहित्य का आनंद उठाया और बहुत—सा ज्ञान समेटा। विश्व पुस्तक मेला भ्रमण के उद्देश्य को सार्थक करते हुए तथा उससे जुड़ी मधुर स्मृतियाँ लेकर अपने—अपने घर लौटे। यह विश्व पुस्तक मेला भ्रमण हमारे जीवन का एक अमिट हिस्सा बन गया।

प्रीति
बी.ए. हिन्दी (विशेष)
हिन्दी साहित्य परिषद
(अध्यक्ष)

रिपोर्ट: हिन्दी में रोजगार की संभावनाएँ

हिन्दी विभाग, कमला नेहरू कॉलेज द्वारा 28 फरवरी 2018 को एक कार्यशाला का आयोजन किया गया। इसका विषय थाः– 'हिंदी में रोजगार की संभावनाएँ।' इस विषय पर श्री शम्भूचरण मिश्र आमंत्रित किए गए थे। वे हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय में हिंदी अधिकारी है।

कार्यक्रम की अध्यक्षता विभाग की प्रभारी डॉ. सुषमा सहरावत ने की। संचालन का कुशल दायित्व प्रीति (तृतीय वर्ष की छात्रा) ने निर्वहन किया। इसके पश्चात विभाग प्रभारी सुषमा सहरावत द्वारा अतिथि का स्वागत किया गया।

इस कार्यक्रम में प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय वर्ष की छात्राएँ उपस्थित थी। सबके चेहरे पर आशा की भावना विद्यमान थी, जो यह बता रही थीं की हिंदी विशेष मैं स्नातक करने के उपरान्त रोजगार की परेशानियाँ आज दूर हो जाएगी। इसके अतिरिक्त विभाग के शिक्षक तथा अन्य लोग मौजूद थे। कार्यक्रम की शुरूआत बड़े ही आकर्षक ढंग से श्री शंभूचरण जी द्वारा किया गया। दृश्य माध्यम प्रभावित करने का अच्छा विकल्प है। इस बात को ध्यान में रखकर उन्होंने इस विषय पर एक पी पी टी भी चलवाया और इसके साथ–साथ स्लाइड को बड़ी ही सरलता से छात्राओं के सामने पेश किया।

विषय पर बोलते हुए उन्होंने सर्वप्रथम हिंदी भाषा की देश के विभिन्न स्थानों पर स्थिति बताई, जिसमें भारत के साथ–साथ विश्व के फ़िजी, मॉरिशस आदि देशों में भी हिंदी का फलता–फूलता स्वरूप नजर आया। इसके बाद राष्ट्र भाषा तथा राज भाषा के रूप में हिंदी को समझाया। तदोपरांत हिंदी विशेष करने के बाद रोजगार के अवसर उन्होंने कुछ इस प्रकार बताए–सामाचार पत्रों में योग्यता तथा रूचि के अनुसार इंटरनेट मीडिया, रोजगार उपलब्ध कराने वाली सरकारी स्वयंसेवी संगठन (दफ्तर, एजेंसियाँ) केंद्र/राज्य सरकारी विभाग में (सहायक निदेशक, हिंदी अनुवादक, रूपान्तर, निजी टी.वी. और रेडियो), हिंदी मीडिया के क्षेत्र में (संपादक, संवाददाता, रिपोर्टर, न्यूज रीडर, डायलॉग, राइटिंग, स्क्रिप्ट राइटिंग, विज्ञापन में आदि। प्रकाशन के क्षेत्र में भी हिंदी में संभावनाएँ अपार है इसको उन्होंने समझाया, श्री शंभुचरण जी ने अवसरो को बताते हुए उन्हे कैसे प्राप्त करना है। इसका भी प्रदर्शन किया। उन्होंने प्रमुख प्रशिक्षण, संस्थान का परिचय दिया जो हिंदी में बैचलर और मास्टर डिग्री के अतिरिक्त अन्य कोर्स भी कराती है। जिसमें प्रमुख संस्थान थे– दिल्ली विश्वविद्यालय के विभिन्न कॉलेज, इंदिरा गाँधी नेशनल ओपन यूनिवर्सिटी (ईग्नू), बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, भारतीय जनसंचार संस्थान नई दिल्ली आदि।

षम्भूचरण मिश्र जी ने छात्राओं को संबोधित करते हुए कहा कि हम हिंदी पढ़े या कोई अन्य विषय, रोजगार हर क्षेत्र में उपलब्ध है, यहाँ आवश्यकता अपनी योग्यता और रूचि को समझने की है। तथा इसके साथ उस लक्ष्य को पाने के लिए दृढ़ संकल्प की है। जिसने स्वंय को परख लिया वह एक ना एक दिन अवश्य ही सफल होता है। मिश्र जी के बातों ने छात्राओं को बहुत प्रभावित किया। कार्यशाला की समाप्ति रजत रानी के धन्यवाद ज्ञापन से हुआ। यह कार्यशाला छात्राओं के लिए बहुत आवश्यक थी और यह सफल साबित हुई।

मंजरी
प्रथम वर्ष (द्वितीय सत्र)
हिन्दी विभाग

धर्म की आड़ में (लेख)

धर्म का अर्थ होता है, धारण अर्थात् जिसे धारण किया जा सके। धर्म, कर्म प्रधान है। गुणों को जो प्रदर्शित करे वह धर्म है। धर्म को गुण भी कह सकते है। यहाँ उल्लेखनीय है कि धर्म शब्द में गुण अर्थ केवल मानव से संबधित नहीं। पदार्थ के लिए भी धर्म शब्द प्रयुक्त होता है। पानी का धर्म है बहना, अग्नि का धर्म है प्रकाश, उष्मा देना और संपर्क में आने वाली वस्तु को जलाना। व्यापकता के दृष्टिकोण से धर्म को गुण कहना सजीव, निर्जीव दोनों के अर्थ में नितांत ही उपयुक्त है। धर्म हर जगह है वेदों के अनुसार धर्म में मानवता को महत्व दिया तो ऋग्वेद में मनुष्यों के कर्मो को। परन्तु आज के आधुनिक युग में मनुष्यों को, धर्म के ठेकेदार हमें हमारी संस्कृति से अवगत कराते है।

कहने को तो हम 21वीं शताब्दी में जी रहे हैं लेनिक आज भी अगर कोई बाबा हमारे भविष्य के बारे में दो बातें क्या बता देता है तो हम उस पर आँखें मूंद कर भरोसा कर लेते हैं। यहाँ तक कि पढ़े–लिखे लोग ज्यादातर तब ऐसा करते हैं जब उन्हें बेटा नहीं होता है। किताबों में बड़ी–बड़ी बात पढ़ लेने से कुछ नहीं होता जब तक हम उसे वास्तविक रूप में न अपनाऐ । आसाराम बापू के कुकर्मों का जब खुलासा हुआ था तो वह 14 लड़कियों का बलात्कार कर चुका था। तथा कई लड़कियों को मरवा दिया था ताकि उसका कोई विरोध न कर सके। लेकिन तब भी लोगों मे उस पर विश्वास करना नहीं छोड़ा तथा दूसरा उदाहरण बाबा राम रहीम जो कई बार फिल्मों में भी देखने को मिले जिसे वो अपनी बेटी बता रहे थे उसके साथ उनके गलत संबंध थे। बेहिसाब संपत्ति जिसका रहीम के पास कोई जवाब नहीं था। तथा उनका खुलासा भी एक लड़की ने ही किया था कि वे हमारे साथ दुष्कर्म करते थे। इसमे कुछ 150 लड़कियाँ थी। अभी फिलहाल में ही कुछ दिनों पहले की बात है आश्रम के रूप में चलाया जाने वाला स्कूल जहाँ लड़कियों के साथ दुष्कर्म तथा अनाथ बच्चियों को वहाँ से बेचा भी जाता था और ऐसे न जाने कितने ही उदाहरण हैं। परन्तु धर्म की आड़ में हमारे विश्वास के साथ खिलवाड़ किया जाता है। तथा कई माता–पिता जो अपनी बच्चियों को उन पाखंडियों के हाथो मे सौंप आते है। क्या उन्हें अपने बच्चो की ज़रा भी फिक्र नहीं है।

यह धर्म का अंधा धंधा तब तक चलता रहेगा जब तक हम इन्हे बढ़ावा देते रहेगें वैसे ही हरियाणा में 'राधा माँ' बहुत ज्यादा प्रसिद्ध हुईं तथा कई बार उन्हे गलत कामों में पकड़ा भी गया है। पाखंडी लोग तथा दूसरे और धर्म के ठेकेदार ये क्या सिखायेगे कि धर्म क्या होता है। जहाँ विश्वास है, मनुष्य के प्रति दूसरे मनुष्य में स्नेह की भावना है जहाँ दुराचार नहीं वहाँ धर्म स्वयं स्थापित हो जाता है। हमे धर्म को जानने के लिए इनके आश्रम की आवश्यकता नहीं है। हिन्दुस्तान टाइम्स के अनुसार हमारे देश में 21 लाख बाबा है जिनमें से कई बाबाओं की तनख्वाह देश के राष्ट्रपति से भी ज्यादा है।

हमें अपना नसीब बदलने के लिए इनका आश्रय न लने के बजाय खुद पर विश्वास करने की आवश्यकता है तथा दृढ़निश्य तथा पूर्ण इच्छा से कोई भी काम किया जाऐं तो वो अवश्य पूरा होता है जरूरत है तो सोच में बदलाव की न कि इन पाखंडी बाबाओं की सोच में बदलाव होगा तभी देश का विकास होगा।

''आड़ लेकर धर्म की, सत्ता सुख की छाँव
अस्त्र लिए कोई हाथ में, कोई घुंघरू बाँधे पाँव
कराह रही इंसानियत, चीत्कार चहुँआरे
धर्म हमारे मौन से, सत्ता का नहीं ठोर
कहीं धर्म के नाम पर, दहक रही बंदूक
कहीं धर्म के नाम पर, भरी हुई संदुक''

धन्यवाद

अन्नू मिश्रा
हिन्दी (विशेष) द्वितीय वर्ष

मीडिया का सच (लेख)

वर्तमान समय में मीडिया लोकतंत्र की अपेक्षाओं पर खरा नहीं उतर रहा है। अंग्रेजी में संप्रेषण और संचार दोनों के लिए एक ही शब्द है कम्यूनिकेशन। कम्यूनिकेशन यानि संप्रेषण के तीन पक्ष हैं–संप्रेषित करने वाला यानि एंकर या पत्रकार, संदेश जो संप्रेषित किया जाता है यानि न्यूज या कन्टेन्ट और तीसरा, संदेश ग्रहण करने वाला यानि श्रोता या दर्शक या पाठक। इन तीनों की कसौटी पर यदि हम मीडिया को देखते हैं तो पाते हैं कि मीडिया वर्तमान समय में लोकतंत्र की अपेक्षाओं पर खरा नहीं उतरा है।

संप्रेषण करने वाला यानि पत्रकार स्वयं आज उतनी मेहनत नहीं करता है जितनी पहले के जमाने में पत्रकार बनने के लिए लोग करते थे। आज के पत्रकारों के पास सतही ज्ञान होता है और वे स्वयं से मेहनत कर खबरों को नहीं जुटाते हैं बल्कि प्रेस विज्ञप्ति पर निर्भर करते हैं। लोकतंत्र को समझने के लिए राजनीति विज्ञान, इतिहास और कानून की जानकारी अनिवार्य है। अनेक पत्रकारों के पास इन विषयों का गहरा ज्ञान नहीं होता है। सबसे बड़ी विडंबना तो यह है कि पत्रकार बनने के लिए आज भी पत्रकारिता का कोर्स करना अनिवार्य नहीं है। इसका मतलब ये हुआ कि जैसे कोई भी व्यक्ति राजनीतिक कार्यकर्त्ता हो सकता है तो ठीक उसी तरह कोई भी व्यक्ति पत्रकार भी बन जाता है। प्रायः यह भी देखा गया है कि टी.वी. चैनल के पत्रकार और एंकर दुखद खबरों को भी हँसते हुए दिखाते है। यानि उनके पास बुनियादी समझ का भी घोर अभाव है।

आज के दौर में संदेश के नाम पर जो न्यूज या कंटेन्ट परोसा जाता है वह या तो प्रायोजित होता है या बासी होता है। एक ही उदाहरण काफी है आजादी के 70 साल के बाद भी मीडिया का ध्यान पत्रकारिता के विकास की ओर गंभीरता से नहीं गया है।

मीडिया का एक बड़ा दायित्व है लोकतंत्र की रक्षा करना इसलिए इसे लोकतंत्र का चौथा खंभा भी कहते हैं। लेकिन हाल के वर्षों में यह देखा गया है कि प्रिंट मीडिया हो या इलेक्ट्रॉनिक मीडिया दोनों की दिलचस्पी विज्ञापन बटोरने की होती है। इससे जो वास्तविक संदेश या वास्तविक समस्याओं की जानकारी पाठक श्रोता और दर्शकों तक जानी चाहिए वह नहीं जा पाती। इस क्रम में जाने–माने पत्रकार और प्रखर कवि हरेन्द्र प्रताप की पत्रकारिता पर लिखी एक कविता शीर्षक 'आज की पत्रकारिता' यहाँ प्रस्तुत हैः–

मैं कलमकार हूँ
पत्रकारिता कर रहा हूँ
बेईमानी के काले तवे पर
ईमानदारी की सफेद रोटियाँ
सेंक रहा हूँ
खून सने हाथों से
खबरों को गूँथ रहा हूँ
लोक के तंत्र को
तंग करते जालों को
तोड़ रहा हूँ
मकड़ों को छोड़ रहा हूँ
समानांतर 'सरकारों' को
जाने–अनजाने
उससे जोड़ रहा हूँ
रोटियाँ बेल रहा हूँ
सपने देख रहा हूँ
संपादक बन चुका हूँ
आदमी बन रहा हूँ

वास्तव में पत्रकारों को भी 'मनुष्य' बनने की आवश्यकता है जिससे मीडिया लोकतंत्र की उम्मीदों पर खरा उतर सके लेकिन अफसोस आज ऐसी स्थिति नहीं है।

मंजरी
बी.ए. (हिन्दी विशेष)
प्रथम वर्ष

भारतीय समाज: कुंठित नजरिया और एक लड़की

''इस समाज में लड़की के विवाह कि चिंता जितनी दृढ़ता से की जा रही है, उस दृढ़ता से यदि मैनेजमेंट अपना काम करना शुरू कर दे तो व्यवस्था बहुत आगे कि ओर अग्रसर होने लगेगी। कोई भी व्यवस्था देश, विदेश, राज्य, ग्राम्य या अन्य कोई तंत्र ही सही जैसे मनुष्य का स्वास्थ्य हीं हो व्यक्तिगत रूप मे। हमारे समाज में 21 वीं सदी के दशकोत्तर के 8 वर्ष पश्चात् भी यदि हमारे समाज में एक स्त्री को वैवाहिक दायित्व तक ही तटस्थ कर दिया जाना उचित समझा जाता है तो, इससे बड़ी विडम्बना और क्या होगी।

शिक्षा के अभाव के कारण यही सोच समाज को अगली पीढ़ी तक यथावत स्थानातरित हो रही है। तनिक भी संदेह नहीं की मुझे और मुझ जैसी तमाम हिन्दूस्तानी लड़कियों को समाज की इस अत्यन्त दमित व तुच्छ विचारधारा पर क्षोभ होता है । जिसमे अपने दायित्वों का निर्वाह रूप केवल पुत्री के विवाह कर देने तक समझा जाता है। ये समाज जिसमे हमारा विकास हो रहा है वहाँ आगे के उभार भी पनपेंगे वहाँ तत्कालिक प्रचलन में यह चुनिंदा बाते हैं।

1. लड़की को 'पढ़ा दो' चूँकि आजकल अनपढ़ो को कोई नहीं पूछता।
2. थोड़ी समझ विकसित हो जाए तो उसकी शादी कर दी जाए।
3. फिर उसकी शादी कर दो क्योंकि न करने पर 'समाज' कबितयाँ कसेगा कि इतनी बड़ी हो गई है, पर माता–पिता को यह दिखाई नहीं देता ।

किसी दूसरे लड़के के साथ भाग जाएगी।

एक नाबालिक लड़की को उसके कैशोर्य अवस्था में जब की उसमें अनेकोनेक शारीरिक तथा मानसिक परिवर्तन आते हैं तब जबकि उसे एक उचित मार्गदर्शन कि आवश्यकता होती है, वो मार्गदर्शक कौन बनेगा? उसके वो क्लास के सहपाठी ? जो स्वयं इस समान अवस्था में हैं, या फिर वे शिक्षक जिनसे वह कभी खुलकर न कह सकेगी क्योंकि उसकी परवरिश का परिवेश उसे यह इज़ाजत नहीं देगा। तो गौरतलब है कि हमें इस समाज की कुंठित होती अवधारणा को बदलना होगा। माता–पिता को अपने उचित दायित्वो को समझना होगा। अपनी उस संतान का उचित मार्गदर्शन वे हीं कर सकते है। पीढ़ीगत अंतराल को जितना हो सके कम करना ही होगा, बीते समय कुछ दशकों मे बहुत ही शीघ्रता से परिवर्तित हुआ है बहुत हीं शीघ्रता से। इसी कारण पीढ़ीगत अंतराल (जेनेरेशन गैप) गहनता से परिलक्षित होने लगा है। सभी समस्याओं का प्रस्फूटन यहीं से होता है और फिर एक बृहत्तर रूप वहन कर लेता है।

1. शादी के लिए लड़की पर दबाव डाला जाने लगता है।
2. उसे समय से पहले अनेकों समस्याओं का सामना करना पड़ता है।
3. उसका शारीरिक व मानसिक विकास इस कारण से अवरूद्ध रह जाता है।
4. ससुराल में भी उसका सम्मान सुनिशचित नहीं होता वह कई प्रकार की यंत्रणाओं को चुपचाप सहन करती है क्योंकि वह आत्मनिर्भर नहीं हो पाई है।

मैं यह कहना चाहती हूँ कि जिस आयु काल में एक लड़की विवाह जैसे चिरकालिक संबंध को वहन करने या स्वीकारने योग्य हो जाती है, तो उस आयु अवस्था में वह इस योग्य भी हो जाती है कि वह इन चुनिंदा कदमों को आगे रखने की ओर भी अग्रसर हो सके।

1. अपने विवाह व शिक्षा में से तात्कालिक महत्व के हिसाब से किसी एक को चुन सकें।
2. विवाह कब करना है यह निर्णय उसका अपना होना चाहिये।
3. अपना जीवन साथी चुनने का अधिकार भी उसे स्वयं है, होना भी चाहिए।
4. जीवन में स्वयं से जुड़े निर्णयों को चाहे वह छोटे हो या बड़े वह उसे स्वयं लेने योग्य हो सके।

यो तो एक स्त्री को परिलक्षित करके अनेकों बार विभिन्न सुधारवादी आंदोलन प्रकाश में रहे हैं जो मानवता को, नारी व नर मे समानता को ध्यान में रखकर किये गए है, किन्तु इस दिशा में समाज के बड़े पढ़े–लिखे वर्ग द्वारा ही अधिक ध्यान दिया गया है। अभी जरूरत है कई कदम आगे बढ़कर सम्पूर्ण समाज को पूरी कटिबद्धता से एक नए भारत को खुबसूरती से गढ़ने की, यह निर्माण हीं होगा एक नई 'सोच से जो की हमारे देश में भी सभी लड़कियों के सफल विकास को व्याख्यायित करेगा और हम भारत को कुंठाओं से मुक्त करने में एक बड़ा कदम आगे रख चुके होंगे।

पूजा राय
बी.ए. हिंदी विशेष
तृतीय वर्ष
रोल न0 439

मूर्ख शेर

किसी वन में एक शेर रहता था। अधिकतर शेरों के समान वह अत्यन्त बलवान और शक्तिशाली था। वह स्वच्छन्दतापूर्वक वन में घूमता फिरता था। वह जब कहीं भी जाता तो बाकी जानवर उसके पैरों की आवाज सुनकर काफी दूर भाग जाते थे। जब कभी कोई स्वस्थ पशु, शाकाहारी भैंसा, कोमल सा खरगोश अथवा डरपोक हिरन उसे मिल जाता था तो वह उसके ऊपर झपट पडता और उसको चीर–फाड़ कर टुकडे–टुकडे कर स्वादिष्ट आहार बना लेता।

एक दिन शेर वन में घूमता रहा किन्तु उसे एक भी पशु न मिला, जैसे ही पशु उसकी जोरदार गर्जन सुनते थे, वह अपने घरों में छिप जाते थे और भयभीत होकर कांपने लगते थे। वह अपने शिकार की तालाश में उस दिन घूमता रहा। सूर्यास्त हो गया था वन पर संध्या का अंधकार छा गया था। सारे दिन की निष्फल खोज के पश्चात शेर घूमता हुआ एक गुफा के पास पहुँचा। अचानक एक विचार उसके मन में आया। अंधेरा हो गया था। गुफा में रहने वाला पशु शीघ्र ही अपने घर आता होगा। शेर ने सोचा कि उसे गुफा में छिप जाना चाहिए और जब पशु आए तो उसका शिकार कर उसे अपना भोजन बना लेना चाहिए। शेर गुफा में छिप गया। इसलिए उसने निश्चय किया कि वह प्रतीक्षा करेगा और जब पशु आएगा तो उसे मारकर खा जाएगा। शेर छिपकर पशु की राह देखने लगा।

कुछ समय बाद वहाँ एक लोमडी आ गई वह उस गुफा में रहती थी। आपको मालूम ही होगा लोमड़ियाँ बहुत चालाक होती है। उसने देखा कि गुफा की ओर जाते हुए किसी के पद चिन्ह वहाँ बने हुए है किन्तु वापस आने का कोई पद चिन्ह नहीं दिखाई देता। पद चिन्ह शेर के पैरो जैसे लग रहे थे। अतः वह अपनी गुफा में प्रवेश करने से पहले जानना चाहती थी। कि अंदर कोई पशु है या नहीं। किन्तु गुफा में प्रवेश किए बिना पता भी कैसे चले। बहुत सोच विचार के बाद उसे एक तरकीब सूझी। उसने पुकार कर कहा, ''हे गुफा मेरी प्यारी सखी'' शेर ने बाहर किसी पशु की आवाज सुन कर प्रसन्नता से खिल उठा। शेर मन की मन बोल उठा अहा। बहुत लम्बी प्रतीक्षा के बाद अब जल्दी मुझे भोजन प्राप्त होगा। उसकी भूख और भी तेज हो गई और उसके मुँह में पानी आने लगा। वह कुछ नहीं बोला। वह चुपचाप छिपा हुआ था बस सुअवसर की ताक में था।

लोमड़ी को जब कोई उत्तर नहीं मिला तो उसने फिर आवाज लगाई, ''मेरी प्यारी गुफा, मुझमे और तुममें जो समझौता हुआ था क्या तुम उसे भूल गई हो? अब हम आते जाते एक दूसरे को नमस्कार किया करेंगे? या फिर अंदर कोई पशु छिपा है और भय के कारण तुम बोल नहीं रही हो?''

शेर ने सोचा संशय को बनाए नहीं रखना चाहिए। मै अंदर हूँ कदाचित इसी कारण गुफा चुपचाप है। उत्तर दे देता हूँ ताकि लोमड़ी का संदेह समाप्त हो जाए। इसलिए शेर बोल पड़ा, ''हे मित्र मै कुछ और सोच रही थी, इसी कारण तुम्हारे प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाई तुम अवश्य अंदर आ जाओ।''

बाहर खड़ी हुई लोमड़ी का संदेह मिट गया। वह मन ही मन अपनी चतुराई पर बड़ी प्रसन्न हुई और चुपचाप वहाँ से चली गई। लोमड़ी ने अपनी चालाकी से शेर को बेवकूफ बनाकर अपनी गर्दन बचा ली।

ज्योति राणा
बी.ए. प्रथम वर्ष
हिन्दी (विशेष)

दीपा की दीवाली

विवाह का दिन था। वर्तिका अपनी नौकरानी की बेटी दीपा के साथ खेल रही थी दीपा की माँ मनोहरा वॉशिंग मशीन से कपड़े निकाल कर बालकनी में सूखने को डाल रही थी। वर्तिका के पापा मनोज अखबार पढ़ रहे थे और उसकी माँ रीना एक घरेलू पत्रिका पढ़ रही थी। दीवाली एकदम करीब थी। रीना घरेलू पत्रिका पढ़ते समय बीच–बीच में अपने पति मनोज से दीवाली से तैयारियों के बारे में बात कर रही थी। वह कह रही थी कि घर के पर्दे किस रंग के होगें, सोफे का कवर किस रंग का होगा उस दिन खाने में क्या बनेगा, वर्तिका और हम कपड़े क्या पहनेंगे और मेहमानों के लिए तोहफें क्या होगें आदि।

इधर मनोहरा बालकनी में कपड़े डालकर लौट ही रही थी कि मेमसाहब की बातें सुनती है। उनके द्वारा दीवाली की तैयारी की जाने की उत्सुकता से वह थोड़ी देर के लिए खुश होती है फिर गंभीर विषाद में डूब जाती है। एक वर्ष पहले रोड़ एक्सीडेंट में उसके पति की मौत हो गई थी। वह और उसका पति लोगों के घर काम करके अपना भरण–पोषण कर रहे थे। अचानक पति के मौत से मनोहरा की जिंदगी अस्त–व्यस्त हो जाती है। मनोहरा उस दुखद घटना को याद करती है और उसकी आँखों से आँसु छलक पड़ते हैं। मनोहरा अपने पति के साथ बिताये हर उस पल को याद करती है। और उसके न होने के दुख से घिर जाती है। उसके पास उसकी नन्हीं सी बेटी दीपा की ढेर सारी जिम्मेदारियां होती हैं जिसकी चिंता से वह सहम जाती है। मनोहरा इन्हीं विचारों में डूबी ही रहती है। कि अचानक घर की मालकिन (रीना) उसे आवाज देती है–मनोहरा!, मनोहरा! उसके विचारों की श्रृंखला टूट जाती है और कहती है– 'जी मेमसाहब!'

रीना और मनोज आज के आधुनिक समाज में रहते हुए भी आधुनिकता की चादर नहीं ओढ़े रहते हैं। दोनों कोमल स्वभाव के हैं। रीना, मनोहर से पूछती है कि वह इस बार दीवाली पर क्या लेना पंसद करेगी। मनोहरा मुस्कुराकर कहती है कि 'जो आप दे दें मेमसाहब!' मनोज कहता है कि 'देखो मनोहरा तुम मेरी छोटी बहन की तरह हो और जब से तुम यहाँ काम कर रही हो तब से हम सबका व्यवहार देख रही हो तो तुम्हें जो मन हो मांग लो।' मनोहरा सकुचा जाती है। और कहती है 'नहीं भाईसाहब! मुझे कुछ नहीं चाहिए बस आप सब की दुआ बनी रहे।' रीना इतने में उन दोनों की बात काटती हुई कहती है–'रहने दीजिए जी ये तो बातों का रायता बना देती है। इस बार हम इसे कॉटन की साड़ी और दीपा के लिए एक अच्छा सा फ्रॉक लेंगे।' सब कुछ तय होने के बाद मनोहरा अपना काम खत्म करके अपने घर चली जाती है और मनोज रीना अपने–अपने काम में व्यस्त हो जाते है। मनोहरा घर जाते समय अपनी बेटी दीपा को भी साथ ले जाती है और वर्तिका कुछ देर अकेले बैठने के बाद अपने घर चली आती है। घर आने पर वर्तिका बाथरूम में हाथ–पैर धोकर जब आती है तब अपनी माँ से कहती है– 'माँ, दीपा के पापा नहीं है क्या? उसकी माँ कहती है– 'हाँ बेटा नहीं हैं। क्यों, क्या हुआ?'

वर्तिका कहती है– 'माँ उसके पापा भगवान के पास चले गये' रीना कहती है– 'हाँ भगवान के पास चले गये पर तुम्हें कैसे मालूम बेटा? वर्तिका फिर कहती

है कि 'माँ दीवाली करीब है ना ग्राउंड में कुछ बच्चे पटाखें छोड़ रहे थे तब दीपा ने कहा इस बार हम दीवाली नहीं मनाएंगे।' मैनें पूछा–क्यों? तो उसने कहा– 'बाबूजी नहीं है हमारे लिए पटाखे और मिठाई कौन लायेगा? फिर उसकी माँ आ गई और वह जल्दी से आँसु पोछ कर उनके साथ चली गई। रीना, वर्तिका से कहती है कि 'उसकी माँ तो 1 बजे ही चली गई और अब तो दो बज रहे है तुम अब तक अकेले ग्राउंड में क्या कर रही थी। वर्तिका कहती है 'माँ मैं उसके बारे में यह सोच रही थी कि उसे इस दीवाली कैसे खुश किया जाये। माँ इस दीवाली क्यों ना हम अपनी खुशियाँ उसके साथ बांटे। मनोज बगल वाले कमरे में लैपटॉप पर कुछ काम कर रहा था। वर्तिका अपनी माँ से कहती है। माँ हमारे घर दीवाली के बाद इतने सारे मेहमान आते हम उन्हें गिफ्ट्स देते है, खाना खिलाते है। इसके साथ ही साथ हम दीपा और उसकी माँ के साथ भी वैसा ही व्यवहार करते हैं। इस बार क्यों न हम दीवाली के दिन ही दीपा और उसकी माँ को अपने घर आने का निमंत्रण दे दें। वे पूरे दिन रहे और रात की पूजा भी हमारे ही साथ करें। इससे हम तो खुश रहेंगे ही दीपा और उसकी माँ को भी खुशी मिलेगी। रीना अपने पति मनोज को आवाज देती हुई कहती है कि 'अजी सुनते हैं आपकी लाडली ने अपनी सखि दीपा के लिए क्या विचार बनाये हैं। मनोज बगल वाले कमरे में बैटकर वर्तिका की सारी बातें सुनता है और आकर कहता है कि हाँ मैने सब सुना है वर्तिका सही तो कह रही है। मनोहरा और दीपा को भी अपने पति व पिता की कमी नहीं खलेगी। और हमारा परिवार भी भरा–भरा लगेगा। रीना भी कहती है– हाँ सच कहा आपने इस दीवाली हम ऐसा ही करेंगे। वर्तिका को उसके माता–पिता अपने गले लगा लेते हैं और कहते हैं 'मेरी रानी बिटिया।'

प्रकृति पाठक
तृतीय वर्ष
हिंदी विभाग

वो चिड़ियाँ है

जब ईश्वर ने इस सृष्टि का निर्माण किया तो उसने अनेक तत्वों का निर्माण किया। उन तत्वों का निर्माण करते समय स्वयं ईश्वर को भी इस बात का भान नहीं होगा कि उसके द्वारा निर्मित तत्व 'माँ स्वयं उसी का पर्याय बन जाएगी। 'माँ' केवल एक शब्द नहीं है वरन् एक अहसास है, एक खुशबू हैं, बच्चे के दिल से गुजरने वाली एक ऐसी आहट है जो उसकी जिन्दगी को एक नया स्वरूप प्रदान करती है। दुनिया में केवल एक माँ का रिश्ता ही ऐसा है जो अपने बच्चे से हज़ारों मील दूर होने के बावजूद उसके सुख और दुख को उसी प्रकार महसूस करती है। जिस प्रकार वह बच्चा स्वयं करता है। माँ एक ऐसी संवेदना है जिसके हृदय तन्त्र पर भावनाओं का संचरण किसी भी अन्तर्जाल से भी अधिक तीव्र गति के साथ हो जाता है। फिर भी एक बेटा अपनी माँ के हृदय के मार्मिक भाव को नहीं समझ पाता है। एक सत्तर वर्ष की बुजुर्ग माँ की अक्सर तबीयत खराब रहती थी। कमर भी झुक गयी थी और ठीक से चल भी नहीं पा रही थी। बुढ़ापे में चेहरे पर झुर्रियाँ और कमज़ोरी ये दो चीज़े स्वतः आ जाती है, और वो इन अम्मा जी को आ गयी थी। इस समय सबसे ज्यादा आवश्यकता होती है प्यार की जो उन्हें नहीं मिल पा रहा था। एक दिन माँ बेटा एक पार्क में बैठे थे। माँ की आँखे भी कमजोर हो चली थी कम दिखाई देने लगा था और सुनने भी ऊँचा लगी थी। पेड पर बैठी चिड़िया को देखकर माँ बोली– बेटे ये क्या है, बेटा बोला– माँ ये चिड़िया है। तभी थोड़ी देर बाद माँ ने फिर पूछ लिया बेटे ये क्या है, बेटे ने झिझक कर बोला– अरी माँ तुझे सुनाई नहीं देता अभी तो बताया था ये चिड़िया है, चिड़िया। अच्छा बड़ी सुन्दर चिड़िया है ऐसे ही 2–3 मिनट बाद माँ ने फिर पूछ लिया बेटे ये पेड़ पर क्या है? बस अबकी बार तो बेटा आपे से बाहर हो गया और चिल्लाकर बोला–माँ चुप बैठ जा। तुझे भूलने की बीमारी हो गयी है कितनी बार तो बता चुका हूँ कि ये चिड़िया है, चिड़िया। फिर भी बार–बार पूछने लगती है अब बिल्कुल मत बोलना और चुपचाप बैठे जा मेरा दिमाग खराब कर दिया।

बेटे की डाँट सुनकर माँ की आँखे नम हो गयी और गला भी भर आया चुपचाप बैठ गयी। फिर थोड़ी देर बाद बड़े प्यार से बोली– बेटे जब तू छोटा था मैं इसी पार्क मे तुझे ये चिड़िया दिखाने लाई थी। तूने मुझसे इक्कीस (21) बार पूछा था, माँ ये क्या है? और मैंने हर बार प्यार से तुझे गोदी में उठाकर बताया था बेटे ये चिड़िया है और हर बार दोनो बड़ी ज़ोर से हँसे थे और आज तुझे तीसरी बार में ही गुस्सा आ गया माँ की ये बाते सुनकर बेटे को बड़ी ग्लानि महसूस हुई और उसने अपनी नज़रे झुकाकर माँ को गले से लगा लिया। तभी माँ ने बोला–अक्सर जो माँ–बाप बच्चे को बोलना सिखाते है, वहीं बच्चे बुढ़ापे में माँ–बाप को चुप रहना सिखाते है।

नाज़मा
हिन्दी (ऑनर्स)

(समीक्षा) फिल्म रिव्यू

लिप्सस्टिक अंडर माई बुरकाः– इस फिल्म का निर्देशन हमारे समाज को समाज में महिलाओं के साथ लैंगिकता की समस्या को सामने लाने के लिए हुआ है। समाज के द्वारा महिलाओं की इच्छा का दमन आम बात है। इस फिल्म को देखने वाला आज का हमारा समाज कहेगा कि 'नारी को आजादी दो गे तो वो ऐसी ही निकलेगी' अर्थात् नारी को स्वतंत्रता देना ही पाप है परंतु इस कथा का जिस प्रकार से निर्देशन किया गया है। वो हमारे समाज की असलियत दिखाता है कि कैसे एक महिला खुले समाज में होते हुए भी खुली सांस नहीं ले पा रही है। इस फिल्म में चार महिलाओं का अहम किरदार दिखाया गया है। ये चारों महिलाएँ एक महिला के उम्र के चार रूप या पड़ाव हैं। एक लड़की है जिसने स्कूल की पढ़ाई पूरी कर ली और उसका पड़ाव कॉलेज मे हुआ है।

– दूसरी महिला है उसकी उम्र शादी की है। उसकी शादी होने वाली है परंतु वह किसी और से प्रेम करती है।
– तीसरी महिला ग्रहणी है उसकी शादी हो चुकी है। उसके तीन बच्चे है।
– चौथी महिला एक वृद्ध महिला है जिसकी उम्र लगभग पार हो चुकी है।

इस फिल्म का एक किरदार जो मुझे सबसे ज्यादा सही लगा वो था। जब लड़की स्कूल की शिक्षा पूरी कर चुकी है और अब वह कॉलेज जाने लगी है। वह बालिका के रूप से परिवर्तित होकर एक महिला जो सब समझती है उस स्थिति में उसका पड़ाव है। इस लड़की का परिवार एक मुस्लिम धर्म से संबंध रखता है। उसका परिवार उस पर हर तरह से बंदिशे लगाता है परंतु उसको शिक्षा मिले। उसका परिवार उसे शिक्षा प्राप्त करने के लिए कॉलेज जाने की इजाजत दे देता है। उस लड़की पर पहनावे से लेकर हर तरह की बंदिशे थी। वह लड़की बुरके में जाती तो थी परंतु उसके अंदर उसका वैसा ही पहनावा था जैसा कॉलेज में सभी का। कॉलेज में हर तरह का फैशन हो इसके लिए उसने चोरियां तक करना शुरू कर दिया।

मेरे अनुसार समाज ने इन रीति–रिवाजों को ऐसा बना दिया है जो लोगो को अन्दर ही अन्दर अपनी इच्छाओं को दबाने पर मजबूर कर देता है। समाज अपने नियमों–कायदे–कानूनों को बेहतर समझता है बजाए एक मनुष्य इसका शिकार हो जाए। समाज इतना कठोर बन जाता है। कि वह अपने रिश्तों नातों की भी परवाह नहीं करता। उदाहरण इस फिल्म का ही जब हमने बेटी को कॉलेज भेजा ही है तो उसको बंदिशों के साथ क्यूँ भेजना बल्कि उसको इन बातों की समझ दो कि क्या गलत है और क्या सही उसको समझाओं कि हमने वैसे तुम्हारी परवरिश की है। उसको समाज से अवगत कराओ पर प्यार से ताकि वह समझ सके। उसको खुद से सीखने का मौका तो दो। उस पर विश्वास तो करो।

समाज में हर तरह के लोग है तो इसका मतलब ये नहीं कि हम भी समाज के तौर तरीके सीखे हमें देखना चाहिए कि क्या गलत है क्या सही तभी हमें निर्णय लेना चाहिए कि हमारे लिए क्या गलत है क्या सही। कभी–कभी जो हमारे लिए गलत हो वो किसी और के लिए सही हो। वह लड़की जब कॉलेज गई तो उसकी इच्छाओं ने उस पर हावी होना शुरू कर दिया। वह सोचने लगी कि ये सब जो करते है वही मुझे भी करना है। उसके लिए स्वतंत्रता यही थी कि वो वहाँ हो रहे सभी क्रियाएँ जो गलत थी और गलत नहीं भी थी पर उसको

अपनी स्वतंत्रता लगने लगी। वह धूम्रपान नहीं करती थी पर करने लगी। वह अपने आप को बदलने का प्रयास करने लगी कि वह सबकी तरह दिखे। उसने आपको समाज के माहौल से मिलाने के लिए बहुत मशक्कत की। उसको वैसा ही ढलना पंसद आया जैसा उसने देखा।

इस फिल्म में मैंने देखा है कि एक महिला से ज्यादा चुनोतियों का सामना शायद ही किसी और को करना पड़ता हो। हम स्वतंत्र नहीं है। हम आत्म निर्भर नहीं है। इसमें कहीं न कहीं हमारा भी दोष है और हमारे समाज का भी दोष है परंतु हमारे समाज से ही उत्पन्न हुए हमारे परिवार को सबसे ज्यादा जरूरत है कि वो अपने घर की स्त्री को इस बात को समझने में सक्षम बना सके कि क्या वो सही है या गलत। उसको आत्मनिर्भर–सक्षम और अपनी बात को न कह पाना। तभी वे समाज में इस तरह से किसी न किसी रूप से ग्रस्त हो गई है। उस लड़की को अपने स्वतंत्रता को अपना हथियार बनाना चाहिए था ताकि आने वाल उसकी अगली पीढ़ी इसका शिकार न हो।

खुशबू
हिन्दी विभाग
प्रथम वर्ष

रोजवाली स्त्री (सपना चमड़िया) पुस्तक समीक्षा

रोजवाली स्त्री में स्त्री की दरकार है कि किस तरह वह रोज–रोज अपनी जिन्दगी से जूझती है। कलम के माध्यम से अर्थात् वक्त को कलम बनाकर अपने जीवन के कुछ पहलुओं के उजागर करना चाहती है लेकिन हमेशा वो वक्त रूपी कलम खो जाती है। इसमें स्त्री के जीवन के ऐसे पक्ष को सामने लाया गया है जो शायद स्त्रियों के सिवा ही कोई समझे कि अगर वो नींद में भी सो रही है और उससे पूछ लिया गया भिंडी कैसे छौंकनी है तो वो बिना सोचे बता देगी कि मैथी से अर्थात् वो इस कार्य में इतनी निपुण हो गई है कि उनको कितनी ही तकलीफ क्यों न रहे पर उनके हाथ अनायास ही काम करते हैं। स्त्री को मुर्गा, गधा, कुत्ता, बैल, गाय इत्यादि जैसे जानवरों से तुलना की गई है कि वह सुबह उठती है मुर्गे की तरह, काम में उसे गधा या बैल समझो, खाने में कुत्ता समझ लीजिए, सीधेपन में गाय और रात में एक खूबसूरत परी में तब्दील होना पड़ता है।

शाम 6 और 6.30 के बीच जो महिलाओं की स्थिति होती है कि किस प्रकार वो अपने पति और बाहर खेलते बच्चे का इंतजार करती है। इसमें स्त्री के शरीर को थाली में विभाजित करके खाने के व्यंजनों की उपमा दी गई है। जैसे–जैसे अलग–2 कटोरियों में विभिन्न अंग परोसे गए हैं, किसी कटोरी मे निरूपन्द आला दिमाग लाल शोखे सा, मासूम दिल, प्लेट में, ठंडी पड़ी चावल और किसी थाली में दुनिया के बेहतरीन कामों को अंजाम दे सकने वाली बुलन्द उंगलियों कटी–फटी पर अच्छे से फ्राई हुई पड़ी है और उस छोटी कटोरी में फ्रिज में ठंडे किए हुए जमाए हुए मेरे होठ पड़े है। इस पुस्तक में अपने पड़ोस में रहने वाले व्यक्ति का उदाहरण लिया है कि सभी पुरूष एक से नहीं होते अपनी पत्नी के बीमार होने पर वह उसके कपड़े धोता, ऑफिस जाने से पहले काम में उसका हाथ बटाता है और मुहल्ले में स्त्रैण कहलाता है। लेकिन वो अपनी पत्नी को अपने समान ही समझता है उसकी दुख–तकलीफों में भागीदार होता है।

यह पुस्तक स्त्री की विडम्बना को दर्शाती है कि एक स्त्री को वह कभी छुट्टी नहीं मिलती वो सूरज के साथ उठ जाती है और फिर लड़ाई शुरू हो जाती है कि कौन काम पहले खत्म करेगा। सूरज पूरा सफर तय करके लौट आता है परन्तु स्त्री कभी नहीं लौट पाती।

स्त्रियों की मानसिकता इस प्रकार कर दी गई है कि वो कहीं भी हो उनके दिमाग में गृहस्थी की ही उधेड़–बुन चलती रहती है। जैसे एक मिटिंग के दौरान मुग्धा ने अचानक मीता से कहा– आज घर जाकर खाना मत बनाना खाना यहीं से लेती जाना और मीतू खुशी से सांस छोडते हुए कहती है– चलो आज तो मुक्ति मिली। औरत जहाँ भी है पर उसके दिमाग में हमेशा गृहस्थी का ही ख्याल रहता है।

एक स्त्री के पास शादी के बाद उसका कुछ नहीं रह जाता, उसका कोई अस्तित्व नहीं होता जैसे सुनीता के घर उसका एक कॉलेज का दोस्त आता है वो डर जाती है, उसकी मुख्य समस्या है कि वह उसको उठाकर घर के सुरक्षा घेरे से बाहर कर दे अर्थात् उसे डर है कि कहीं उसका पति या कोई देखेगा तो आफत आ जाएगी। ऐसे ही एक ऑटो चालक की लड़की JNU में पढ़ रही होती है वो सोचती है कि किसी लड़के का नं0 ले ले और उससे एडमिशन की जानकारी लेती रहे, लेकिन उसकी इतनी हिम्मत नहीं हो पाती ।

पुरूष किस कदर रूप बदलता है अर्थात् उनकी नज़रों में स्त्रियो की कोई अहमियत नहीं है। जैसे कविता लिखने के दौरान कोई आदमी कोई गड़बड़ी नहीं निकालता परन्तु दूसरे के सामने बहुत झेलता है।

मुक्ति किससे अर्जित की जाती है श्रम से या मूल्य चुका कर, हम सिर्फ घटनाओं को भोगते रहे और भूलते जाए तो हम सिर्फ उपभोक्ता के हैसियत से इस समाज में रहेंगे पर सभी घटनाओ को उधेड़ना और फिर अपने तरीके से बुनना पड़ता है।

इतिहास को खंघालने का प्रयास किया गया है। ज्ञान को आत्मसात् करके एक स्त्री उन्हीं को परास्त कर दें। स्त्रियों ने आज ठान लिया कि सबक सिखा कर रहेंगे। ढूँढ़ लाए एक मुर्ख कालिदास और जिस स्त्री ने पढ़ने का जतन किया था। गीता पढ़कर सीता बनने से जिसने विद्रोह किया था वह भी अततः एक मूर्ख की परिणति बन गयी।

सभी विषय अपने आप से पृथक होते हुए भी एक–दूसरे से पूर्णतः जुड़े है।

यह एक औरत की आत्मकथा न होकर औरतों की सांझी आत्मकथाएं है। उनका दोष, उम्र के बाद चीज़ों को समझने का दृष्टिकोण पुरूष, पति, पिता, मित्र सभी चेहरों में उसकी एक ही संस्कृति है।

यहाँ स्त्री की बेचैनी जिसे वह अक्सर समझ नहीं पाती उसका विश्लेषण घर, सौन्दर्य, आहार भौतिकता आदि के संदर्भ में किया है।

पुस्तक में अद्‌भुत छोटी–छोटी रोजमर्रा की जिन्दगी और स्त्री का सजीव वर्णन है। जैसे जब घर को छोड़कर निकलती हूँ तो घर व्यंग्य में कहता है– आ गई यह घूमकर, आजकल मुझे छोड़कर बहुत बाहर घूमने का चस्का लगा है।

कुछ–कुछ प्रभा खेतान की आत्मकथा और उपन्यासों की याद दिलाता है।

कहानी, उपन्यास को FORM (फोर्म) में है। प्रत्येक स्त्री के बहाने गंभीर चिंतन है। ज़ैसे खुद गन्दे लोग है, यानी सभी बड़े अच्छे नहीं होते।

इसमें संवेदनशीलता अपने मार्मिक भोलेपन के साथ उपस्थित है मेरा दावा है कि दुनिया मे सबसे बेशर्म जो चीज़ तैयार हुई है वो है पुरूष की आँखे। मुझे लगता है कि एक्शरे मशीन जिसने ईजाद की, उसने भी इन्हीं आँखो से प्रेरणा ली होगी।

इसमें पूँजीवाद का भी वर्णन है– यहाँ बस एक सवाल पूछना चाहूँगी कि सिर से दुपट्टा न सरकने देने वाले हाथ और जींस को कमर पर किस निचाई पर बाँधना है ये दोनो हाथ क्या एक ही व्यक्ति। व्यवस्था में नहीं है?

आफरीन
बी.ए. हिन्दी विशेष
(तृतीय वर्ष)

यहीं कहीं था घर (सुधा अरोड़ा) पुस्तक समीक्षा

सुधा अरोड़ा हमारे समय की वरिष्ठ लेखिका है। 'यहीं कहीं था घर' उनका नवीनतम प्रकाशित उपन्यास है। इस उपन्यास में उन्होंने समकालीन परिदृश्य में परिवार, समाज, तकनीक एवं नैतिक मूल्यों से सम्बन्धित पहलुओं को उजागर किया है। यह उपन्यास दो घरों की कहानी में विभाजित है।

पहला घर–

मोहल्ले की लड़की जब बड़ी होती है–विशाखा नाम की लड़की जो अभी यौवनवस्था में कदम रख रही है। उसे देखकर लगता है वह बहुत ही खुश है अपने शरीर के नए–नए परिवर्तन को लेकर लेकिन ये उमंगे खुद तक ही सीमित है क्योंकि कुछ नत्थू नाम के भेड़िए उन पर नजर रखते हैं और मौका पाकर उस पर हमला करते देर नहीं करते। इस उपन्यास का देशकाल वातावरण भी अच्छे से विश्लेषित किया गया है। इस समाज में अंधविश्वास तथा रुढ़ियों की अधिकता है। ये यहाँ से पता चलता है जब बाबा विशाखा को पास बुलाकर उसे गलत जगह छूते हैं और अगर वो घरवालों को बताएगी भी तो विशाखा पर यकीन न करके उन बाबा पर यकीन करेंगे क्योंकि उस पाखण्डी ने अपने पाखण्ड से उन्हें अपने वश में कर रखा है। कई बार घरवाले बच्चों की बातों को नजरंदाज कर देते हैं क्योंकि वे डरते हैं विरोध करने पर कहीं समाज से उनको निकाल न दिया जाए। समाज में लड़कियों के प्रति असुरक्षा का भाव है। लड़कियों के फेल हो जाने पर उनको प्रोत्साहन न देकर उनको घर पर बिठा दिया जाता है।

देह धरे का दंड– लड़की के बड़े होने में देर न हुई कि शादी की बात शुरू। इस उपन्यास में विशाखा की माँ जो समाज में किसी बात में हिस्सा न लेकर केवल बच्चें पैदा करती, उनका पालन पोषण तक ही उनका जीवन सीमित था और ज्यादा बच्चे होने पर सही देखभाल न होने से बच्चों की मौत हो जाती है।

दूसरा घर

वह भी बंटी जैसा ही एक बालक है जो माता–पिता के असहज रिश्ते के बीच पिसता है।

वह अपनी माँ को हँसने के लिए कहता है जैसे वे पहले हंसती थी जैसे तस्वीर में है। लेकिन ये उन दिनों की बात है जब उनकी शादी हुई थी यानी प्रेम विवाह। वह अपने असहज जीवन के लिए खुद को दोषी ठहराती है एवं खुश रहने की कोशिश करती है। उसके बाद दिवाकर उसके कपड़े पहनने पर भी खुश नहीं होता जो खूब तारीफे किया करता था।

मोनू के हठ कर पूछने पर कहता है क्यों जला रहे हो कागज को तो चि0 नरक चौदस (सफाई का कोई त्यौहार) बहाना कहती है इसलिए जला रही हूँ घर की सफाई हो जाएगी लेकिन वजह और ही थी वो प्रेम पत्र जला रही थी। दिवाकर ने शादी से पहले जो चित्रा को दिए थे। अब उसका कोई मतलब नहीं था वो बदल चुका था पुरा। मोनू का दिवाकर से शिकायत करने पर दिवाकर का व्यंग्य से कहना– ''अपनी माँ से कह, कुछ और रह गया हो तो उसको भी जला दे।''

बच्चे अपने आसपास के वातावरण से बहुत कुछ सीखते हैं इसलिए उनके सामने कोई भी बात सोच समझकर बोलनी चाहिए। जैसे दादी के छिनाल कहने पर मोनू भी उसे लिखता है पढ़ता है।

यह बात तो सही है कि एक औरत का दुख एक औरत ही समझ सकती है। जब दिवाकर के दूसरे सम्बन्ध के बारे में झाई जी को पता चलता है तो उनका व्यवहार चित्रा के प्रति बदल जाता है। पहले

वे चित्रा को तकलीफे दिया करती थी। लेकिन अब चित्रा के लिए सहानुभूति का समुन्द्र उमड़ आया था कलेजे में।

माँ–बाप की इस तरह की लड़ाई से बच्चों पर सबसे जयादा असर पड़ता है। वो अपने घर की लड़ाई–झगड़े से इतना परेशान हो जाते है कि चित्रा का उसे व्यंग से स्पर्श करने से मोनू कहता है–(Please live me Maa.. I don't need you... Live me alone...)

चित्रा और दिवाकर दोनों दिखावे का जीवन व्यतीत कर रहे हैं– ''जिस तरह बाहर जाने से पहले अलमारी से कपड़े निकालती हूँ उसी तरह अपने होठों के नाम की मुस्कान भी पहन लेती हूँ लौटकर जिसे कपड़े के साथ तहकर रख देना है।

ऐसे में भी पीड़ा समझकर भी उसका साथ नहीं देती क्योंकि उनके ऊपर पुरूषसत्ता तथा रुढ़िवादिता का दबाव है। घर की स्थिति ठीक न होने पर इससे बच्चों के भविष्य पर भी असर पड़ता है। बच्चे हर गतिविधियों में पिछड़ जाते है। बच्चों का भविष्य घर के वातावरण पर केन्द्रित होता है।

आज भी शादियों में लड़की को महत्व नहीं दिया जाता हालांकि उन्हें ही जिन्दगी का सफर तय करना है। बिना उसे अहमियत दिए वो आपस में ही शादी तय कर देते है। शादी से पहले लड़कियों को ससुराल के लिए तैयार करना पड़ता है जैसे खाना बनाना, गृहस्थी सम्भालना, लड़कियों को बचपन से सीख दी जाती है कि वो पराया धन है।

सुजाता शादी के समय इतना घबरा जाती है कि बेहोश हो जाती है, क्योंकि वो खुश भी होती है और डर भी समाया रहता है कैसे रहेगी वो अंजाने घर में अंजाने लोगों के साथ इसी उठापटक में उसका संतुलन बिगड़ जाता है और वो बेहोश हो जाती है।

घर में रोज–रोज की लड़ाईयां देखकर मोनू मानसिक रोग से ग्रस्त हो गया। मोनू बेहद विद्रोही, चिड़चिड़ा, गुस्सैल हो गया। वह जब भी बोलता ऊँची आवाज में बोलता और हाफने लगता। स्कूल में किसी से बोल नहीं पाता और अंत में दिवाकर का यह कहना कि–''यह सब तेरी वजह से है।''

– बच्चों के मन घर में हो रहे वार्तालाप और कहे शब्द बहुत जल्दी पकड़ते है। मोनू सहमा माँ से कहता– ''माँ आप पापा के साथ खिचखिच क्यों कर रहे थे'' ये अक्सर दिवाकर कहता था चित्रा को। चित्रा की सहेली द्वारा कहे जाने पर भी कि जब तुम दोनों के बीच कुछ है ही नहीं तो अंधेरे में किस चीज का इंतजार करती हो तुम तलाक केवल दो शख्सों को ही दूर नहीं करता बल्कि उससे जुड़ी हर चीज दूर हो जाती है। होस्टल देखकर आने के बाद मोनू परेशान रहता है और अकेले रहने को कहता है सो के उठता है और उसकी आँखे चड़ी रहती है और वो रो–रो के कहता है– ''मेरे सिर के अन्दर कुछ लटक रहा है, झूल रहा है। और दर्द से आँखे मूँद लेता है।
– कोई भी चीज़ हद से ज्यादा अच्छी नहीं होती। चित्रा मोनू को बहुत प्यार करती थी। क्योंकि वही एक था वो उसे अपना लगता है जिसके लिए वह जीती थी।
– दिवाकर का मोनू से यह कह देना कि तुम्हारी माँ तुम्हें होस्टल में नहीं भेज रही है। मोनू का चित्रा के प्रति आक्रोश फैल जाता है। मोनू का चित्रा ठपजबी को कहना। मोनू का एक कमरे से दूसरे कमरे में गलियारे में रसोई में पैर धम–धम पटकता हुआ, बेतहाशा हँसता हुआ भागता है। दोनो मुठिठ्यां भीच रखी है और कहता है– ''मुझे होस्टल ले जाओगे! आओ सामने! देखता हूँ मुझे कौन ले जाता है, आर यू बास्टर्ड!'' डॉक्टर के इंजेक्शन से उसकी भींची मुठिठ्यां धीरे–धीरे बेजान होती जा रही है। उसे स्ट्रेचर पर डाल दिया गया है।

समग्रत' यह उपन्यास समकालीन सामाजिक स्थितियों का सम्बन्धों की दुनिया में प्रभावशाली रूप में चित्रित करता है।

आफरीन
बी.ए. हिन्दी विशेष
(तृतीय वर्ष)

संजय जोशी (साक्षात्कार)

कमला नेहरू कॉलेज में 'हिन्दी साहित्य और सिनेमा का अन्तर्सम्बन्ध विषय पर दिनाँक 13 नवम्बर 2017 को एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया था। जिसमें वक्तव्य के लिए आए प्रख्यात सिनेमा अध्येता निर्माता श्री संजय जोशी जी ने अत्यंत सारगर्भित शब्दों में सिनेमा और साहित्य के संबंधों को दर्शाया। कमला नेहरू कॉलेज की छात्राओं द्वारा श्री संजय जोशी जी का साक्षात्कार लिया गया था। जिसका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है।–

प्रश्नः सर आप अपने शैक्षिक सफर के बारें में बताइए?

उत्तरः नहीं वो तो ऐसा कुछ खास नहीं है। और मेरा कोई काम भी नहीं है। मैं दूसरे लोगों का काम दिखता हूँ मेरे ख्याल से मैं भी सिनेमा बनाता था और मैं अपने तरह का सिनेमा बनाना चाहता हूँ इसलिए मैने यह अल्टनेट रास्ता चुना यही मेरी अगली जर्नी है इस जर्नी के चक्कर में यहाँ पहुँचा हूँ तो अभी मै सिनेमा के नए दर्शक बनाना चाहता हुँ। और मुझे पूरी उम्मीद है। कि जब हमारे दर्शक नये बड़े बन जाएँगें तो वही हमें इस तरह की कहानी बनाने में पैसे देगें क्योंकि जब तक नये दर्शन नहीं होगें तब तक नये सिनेमा बनाकर दिखाएगें कहाँ तो मैंने जामिया से पढ़ाई की है और ज्यादातर मैं फिल्में देखीं हैं।

प्रश्नः सर आपने जो प्रतिरोध का सिनेमा आंदोलन शुरू किया इसके पीछे क्या प्रेरणा थी?

– देखिए! मुझे प्रेरणा मिलती अगर आप ये पूछते कि सर इस विषय पर फिल्म है क्या? प्रतिरोध का सिनेमा आंदोलन तो आज तक पहुँचने से मिली कामयाबी है। आज तक कैसे पहुँची यह प्रश्न है और मुझे लगता है कि अगर आप लोग सोचें तो कुछ आप लोगों के दिमाग में कोई सवाल घूम रहे हैं। तो इसमें कोई फिल्म है क्या? या आपके पास कोई विषय है उस पर अपना फिल्म बनाना चाहते है या आप अपने फिल्मों को कैसे दिखाएँ कैसे लोगों तक पहुँचे तब मुझे ज्यादा प्रेरणा मिलेगी कुछ बोलने की। अभी तो क्या है कि वो जर्नी है। जर्नी तो बीते गये बारह साल से चल रही है। बेसिकली नई दर्शक बनाने के लिए प्रेरणा जागृत हो रही है। नये दर्शक कैसे बनाया जाए सब नये दर्शक होगें तभी तो फिल्म दिखाएँगे।

सर बहुत–बहुत धन्यवाद।

कनिका मित्तल, ज्योति राणा
हिन्दी विशेष
प्रथम सत्र

अमरनाथ अमर (साक्षात्कार)

कमला नेहरू कॉलेज में 'हिन्दी साहित्य और सिनेमा का अन्तर्सम्बन्ध विषय पर दिनाँक 13 नवम्बर 2017 को एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया था। जिसमें वक्तव्य के लिए आए प्रख्यात मीडिया एवं सिनेमा विशेषज्ञ श्री अमरनाथ जी ने अत्यंत सारगर्भित शब्दों में सिनेमा और साहित्य के संबंधो को दर्शाया। कमला नेहरू कॉलेज की छात्राओं द्वारा श्री अमरनाथ अमर का साक्षात्कार लिया गया था। जिसका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है।–

प्रश्नः सबसे पहली जिज्ञासा मेरी यह है कि आपके नाम में अमरनाथ के साथ 'अमर' लगा है उसका रहस्य क्या है?

– (हँसते हुए)– इसके पीछे कोई रहस्य नहीं है मैं पटना बिहार का रहने वाला हूँ और जब हम एम.ए. करके निकले तो उस वक्त मैं 'अमरनाथ शर्मा' मूल नाम मेरा है तो अमरनाथ शर्मा के नाम से कविताएँ– कहानियाँ लिखा करता था फिर 'अमरनाथ शर्मा अमर' के नाम से लिखने लगा लेकिन एक घटना घटी जिसके कारण मैंने ट्रैडर हटाया। अपनी बहन का मार्कशीट लाने में मगध विश्वविद्यालय में गया हुआ था तो वहाँ किसी ने सर्टीफिकेट देने समय जाति (Caste) के बारे में पूछा और वो मुझे बड़ा नागवार गुज़रा कि व्यक्ति की पहचान या छात्र की पहचान जाति से नहीं है इंसान से है तो मैंने कहा कि मैं सिर्फ इंसान हूँ किसी जाति का नहीं हूँ तो मैंने ऐफिडेविट कराके अपना नाम बदला फिर अपना नाम अमरनाथ अमर रख लिया क्योंकि मैं जात–पात और वर्ग–विशेष में विश्वास नहीं करता इसलिए सोचते हुए या थोड़ा रूकते हुए आप अपने शैक्षिक सफर के बारे में कुछ बताए।

– बचपन एक छोटे से शहर जो अब झारखण्ड है पहले बिहार था कतरास वन बाद में जुटा मैट्रिक तक वहीं परशिक्षा हुई उसके बाद पटना में।

प्रश्नः आप दूरदर्शन में कब से हैं?

– मैनें दूरदर्शन सन् 1985 में Join किया।

प्रश्नः आपकी मीडिया के क्षेत्र में आने की रूचि कैसे बनी?

– बचपन से कविता–कहानी ये सब लिखा करता था और बचपन से ही आकाशवाणी में छोटे–छोटे प्रोग्राम दिया करता था जैसे बच्चों के कार्यक्रम हैं फिर कविता कहानी, निबंध और ये करने के बाद वाणी प्रोग्राम हुआ करता था तो वहाँ कविता–कहानी ये सब मैं दिया करता था और एक कार्यक्रम 'डायरी के पन्ने' जिसमें आप जो अपनी डायरी लिखते हैं अपने जीवन के बारे में, अपने विचारों के बारे में तो वो प्रोग्राम होता था तो उस प्रोग्राम को करने के बाद तो बहुत लोग ये करते थे कि मैं कहाँ गया, क्या खाया, क्या मिला इत्यादि बातें और मैं वैचारिक स्तर पर अपनी भावनाओं को रखता था। उसने मुझे लोकप्रियता दी वहाँ पर फिर मैं Casual Announcer ' बना तो मेरी रूचि जो Civil Servies की ओर थी पहले वो धीरे–धीरे साहित्य और की तरफ बढ़ने लगी और फिर लगा कि नहीं अब मुझे मीडिया में ही जाना चाहिए तो फिर बाद में Permanent Announcer बना और वहाँ से शुरूआत हुई।

प्रश्नः बढ़ते चैनलों की बाढ़ में दूरदर्शन को आप कहाँ खड़ा पाते हैं?

(थोड़ा–सा रूकते हुए): दूरदर्शन 15 सितम्बर 1959 में इसकी शुरूआत हुई थी सामाजिक सरोकार के दायरे में की सामाजिक सरोकार से संबंधित, जन–हित से संबंधित कार्यक्रम उसे देना है। आज भी दूरदर्शन अपने उन्हीं मूल्यों पर 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' के मूल्यों पर चला रहा है वैसे ही कार्यक्रम में सामाजिक सरोकार से चाहे वो कोई व्यक्ति कि बात हो, खेती–बाड़ी की बात हो, युवाओं के स्वास्थ्य की बात हो बच्चों की बात हो, बुजुर्गो की बात हो तमाम जितने जीवन के पक्ष हैं उन सभी से जुड़े चाहे वे लोक–साहित्य हो, लोक–जीवन हो,

लोक–संगीत हो, नृत्य हो जो हमारे मूल्य हैं दूरदर्शन एक ज़माने में आपको याद होगा जब हम लोग भी छोटे थे तो एक 'वनस्पति–घी' जिसका नाम हम लोग लेते हैं 'डाल्डा' आपको शायद पता होगा तो वो कोई भी वनस्पति हो एक का ट्रेडमार्क हो गया था कि हमें डाल्डा चाहिए, डाल्डा मतलब वनस्पति घी चाहिए उसी तरह से एक ट्रेड–मार्क दूरदर्शन जैसे शुरूआत हुई तो आज टी.वी. का मतलब लोग दूरदर्शन लोग कहते हैं लेकिन आज की पीढ़ी पढ़ी लिखी है वो समझते हैं कि दूरदर्शन जो सरकार के जो दूरदर्शन टेलिविजन हैं डी–डी नैशनल कहलाता है, डी–डी भारती कहलाता है तो वो है और अलग– अलग जो चैनल है उनके अपने–अपने नाम हैं तो दोनों स्थितियाँ हैं।

प्रश्नः दूरदर्शन के समक्ष आज क्या चुनौतियाँ हैं?
दूरदर्शन के समक्ष आज सबसे बड़ी चुनौती है जो बेरोज़गारी है, जो गरीबी है, जो शिक्षा है और जो संघर्षरत लोग हैं उनके लिए वो कैसे मार्गदर्शन बना है और अपने जो जीवन मूल्य हैं, अपनी जो परम्पराएँ हैं, जो इतिहास है, साहित्य है, लोक–परम्पराएँ हैं उसको संरक्षित रखें उसको जीवंत रखें और टी.आर.पी के मामले में न उलझा कर सामाजिक सरोकार के जितने भी मुद्दे हैं चाहे वो स्वास्थ्य से जुड़ा हो, चाहे वो साहित्य से जुड़ा हो उसको लेके चलें। एक चुनौती आज टी.आर.पी. के रूप हैं उस संबंध में हम क्या ऐसा दें जिससे युवा–पीढ़ी अपने मूल्यों से जुड़ी रहे और जो नारी के विविध पक्ष हैं, विविध रूप हैं जो आज दिखाए जा रहें हैं जिससे आप भी सहमत न हों उन चीज़ों से युवा पीढ़ी को बचाकर रचनात्मक दिशा में आगे बढ़ाएँ सबसे बड़ी चुनौती आज यह है।

प्रश्नः आपकी दृष्टि में क्या दूरदर्शन को भी व्यवासायिक चैनलों की भाँति बनना चाहिए या सांस्कृतिक, सामाजिक पक्षों से ही जुड़े रहना चाहिए। नहीं कुछ हद तक तो व्यवसायिकता तो है दूरदर्शन में भी जैसे हम Sponsered Programe बनाते हैं आपने रामायण देखा होगा, महाभारत के बारे में भी सुना होगा तो दूरदर्शन को अपनी कमाई करनी है Sponsered कार्यक्रमों के माध्यम से लेकिन जो जीवन–मूल्य से, सामाजिक सरोकार से जुड़े जितनी भी चीजे हैं उन्हे भी हमें बचाकर रखना है। हमें कमाना है लेकिन मूल्यों को ताक पर रखकर नहीं उनको लेकर चलते हुए।

प्रश्नः दूरदर्शन की भाषा के बारे में आप क्या सोचते है कि क्या वह वनमानस की भाषा है?

देखिए भाषा के संदर्भ में आज बहुत–सारी बातें हो रही है। विशुद्ध हिन्दी, मिलीजुली हिन्दी और अंग्रेजी से भ्रष्ट हिन्दी तमाम तरह की बाते हैं खासकर आपकी जो पीढ़ी है उसमें तमाम तरह की बातें हो रही है जो साहित्य के विद्यार्थी हैं तो उस व्याकरण की भाषा की शुद्धता को जिंदा रखें उसे मरने नहीं दें अगर व्याकरण खत्म हो गया तो बहुत –सारी चीज़े बिखर जाएँगी लेकिन हिन्दी को अगर विकास करना है तो आपको मिलीजुली भाषा को भी प्रयोग करना होगा। मान लीजिए कोई दक्षिण भाषा को विद्यार्थी है या कोई व्यक्ति है तो वो तमिल, तेलगु या अन्य भाषाओं में वहाँ साहित्य की भाषा या व्याकारण की भाषा को महत्व नहीं देंगें वहाँ हम उसे हिन्दी में कितना भी बोल रहा है या किसी टी.वी. चैनल रिर्पोटिंग कर रहा है टूटी–फूटी हिन्दी में तो उसे हमें आज स्वीकार करना होगा, उसे हिन्दी के विकास के रूप में देखना होगा लेकिन जहाँ पक्ष है, भाषा का विकास एक अलग–पक्ष है तो दोनों में समन्वय स्थापित करके आज आगे बढ़ना होगा और हिंसा की भावना को नकारना होगा। हिन्दी का मतलब गौरव है हिंसा की भावना नहीं है खासकर अंग्रेजी के समक्ष।

प्रश्नः आप अपनी ओर से हमें कुछ विशेष सुझाव देना चाहते हैं।
खूब पढ़िए, खूब लिखिए सबसे बड़ी ये छवि है और जो ये भारतीय संस्कृति है, हो परम्परा है, जो जीवन मूल्य है जो सदियों से चली आ रही हैं जो सकारात्मक हैं उनको पढ़िए और अपने आपको

तोलिए कि आप कितने भाग्यशाली हैं की हिन्दूस्तान जैसे देश में आप पैदा हुए इतनी सांस्कृतिक विरासत, ऐतिहासिक पक्ष, भौगोलिक पक्ष, इतने मौसम, पर्यावरण की चीजें, हिमालय, कहीं ठण्ड, कहीं गर्मी, की बारिश इतनी विविधता पूरे विश्व में कहीं नहीं है उसको समझें उसको आत्मसात कीजिए अपने आपको उन्नत कीजिए बढ़ाइए और साथ–साथ आपके समझ जितने लोग जुड़े हुए हैं उनकों भी आगे बढ़ाइए। आज की सबसे बड़ी जरूरत यही है।

प्रश्नः आप अपनी रूचि के बारे में भी कुछ बताइए।

(हँसते हुए) – कविता –कहानी तो है ही, संगीत सुनना है, पेंटिग करना है, थोड़ा–बहुत फोटोग्राफी का शौक है और लोगों से मिलना–जुलना, घूमना–पर्यटन खूब पंसद है।

– अपने अपना बहुमूल्य समय हमें दिया इसके लिए आपका बहुत–बहुत धन्यवाद।

आपका बहुत–बहुत धन्यवाद।

कनिका मित्तल
कीर्ति, ज्योति राणा
हिन्दी विशेष
(प्रथम सत्र)

साक्षात्कार : डॉ. रविकांत

कमला नेहरू कॉलेज में 'हिन्दी साहित्य और सिनेमा का अन्तर्सम्बन्ध विषय पर दिनाँक 13 नवम्बर 2017 को एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया था। जिसमें वक्तव्य के लिए आए प्रख्यात मीडिया एवं सिनेमा विशेषज्ञ श्री अमरनाथ जी ने अत्यंत सारगर्भित शब्दों में सिनेमा और साहित्य के संबंधो को दर्शाया। कमला नेहरू कॉलेज की छात्राओं द्वारा श्री रविकांत का साक्षात्कार लिया गया था। जिसका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है।–

प्रश्न 1 21वीं सदीं से वर्तमान दौर मे फिल्मों में किस तरह का बदलाव आया है?

उत्तर–1 21वीं सदी ..फिल्में लगातार बदलती हीं रही हैं, 21वीं सदी में आप कह सकती हैं कि फिल्में ज्यादा फिल्मी हो गई है और साहित्य से जो उनका जुड़ाव था, अभी भी है, लेकिन अब थोड़ा मुख़्तलिफ किस्म का हो गया है। फिल्में फिल्मों का ही इस्तेमाल कर रही हैं न की साहित्य का। पहले साहित्य से ज्यादा लगाव हुआ करता था। और... बहुत कुछ हुआ है जब से डोल्बी साऊंड आया तो एक खास तरह का बदलाव, एनीमेशन फिल्में बहुत ज्यादा आने लगी। कार्टून फिल्में जिसको आप कहते हैं और अब शॉर्ट फिल्में बनने लगी हैं, तो सबसे बड़ा बदलाव तो यह है कि मल्टीप्लेक्स आए तो देखने के तरीके और देखने की जगह में बदलाव आया। छोटे–2 स्क्रिन हो गए बड़े स्क्रिन की जगह और इसलिये फिल्में अब छोटे दर्शकों के लिये भी बनने लगी हैं। नई सदी में आकर। तकनीकी पक्ष सबल हुआ है, पहले से और मैं यह भी कहुँगा कि संगीत का पक्ष थोड़ा कमजोर हुआ है पहले से। पहले जितने गाने पृष्ठभूमि में चलते हैं यानि पहले 'टेलेन..पर्दे पर गाने की गाते हुए बाकायदा दिखाई देते थे। अब 'लिप्सिंग' काफी कम हो गयी है। तो ढ़ेर सारे बदलाव आए हैं। अब फिर से छोटे शहरो की कहानियाँ कही जाने लगी है, और ऐसे बहुत सारे किरदार निकले है, जोकि स्टार नहीं है स्टार पहले जितने लम्बे रेस के घोड़े नहीं है, स्टार की आयु छोटी हो गई है, तरह–2 की पैदा हुई हैं, बाहर से भी आई है बहुत सारी। लेकिन अंदर से तो है हीं फिल्मी दुनिया के हैं जो उनकी ही संतान हैं, लेकिन बाहर से भी आए हैं। सबसे बडा बदलाव जो मुझे लगता है, भाषा के हिसाब से वो है हिन्दी पर इंग्लिस वर्चस्व बढ़ रहा है।

प्रश्नः पूजा– सर कई बार तो लगता है कि जब हम 'मूवीज' देखते हैं, आजकल जैसे की मैं बोल रही हूँ 'मूवीज' तो बहुत बारीकी से देखना भी पड़ता है कि वो कहना चाह रहे हैं, तो इतना ज्यादा घाल–मेल हो गया है। दोनों ही ओर का, के यदि हम माता–पिता के साथ बैठकर देख रहे हैं तो वे बात समझ हीं नहीं पाते हैं...कि बेटा बताना क्या बोल रहे हैं?

सरः– तो फिल्म हमेशा से बहुआयामी जगह रही हैं, जैसे होली साहब भी कहते थे न कि गैर हिन्दी भाषी प्रदेशों में सिनेमा फलता–फूलता है। मुम्बई उसकी जैसी की राजधानी रही है, तो इस हिसाब से वहाँ की बोली–पानी का असर तो आएगा हीं, गुजराती बहुत सारे फाइनेंसर होते हैं तो उनकी जुबान उसमें आ जाती है, पंजाबी पाकिस्तान से आए हैं, तो वो भी जैसे दिलीप कुमार हैं, देवानंद सब...सब कहीं न कहीं पाकिस्तान से आ रहे हैं, तो उनका भी घर था। लिखने वाले भी कई। लेकिन सिनेमा में हर तरह की शान आपको मिल जाएगी। जैसे गंगाजल–2 बनती है 1960 में है न, उसी समय जब मुगल–ए–आज़म बनी और वह फिल्म बना रहे हैं। इस तरह की विविधता हमारे फिल्मो की खासियत थीं, क्योंकि उसकी महत्वकांक्षा है कि वो सबको पकड़े रहे। हर बाज़ार तक पहुँचे।

जहाँ तक पहुँचा सकता है पहुँचे। विदेशी बाजार को भी पकड़ना है उसकी और देशी पुराने बाजार को भी पकड़ना है, तो कभी हरियाणवी भी उसमें आ

जाएगी। कभी उसमें मराठी भी आ जाएगा, सब जगह से सोर्स लेता है, कहानियाँ लेता है, संगीत लेता है उसका आदान–प्रदान लगातार चलता ही रहता है।

प्रश्न 3 : सर आपके विचार से सिनेमा साहित्यिक हो सकता है?
उत्तर 3 : सिनेमा साहित्यिक हो सकता है। मैं जैसा कि कह रहा था अपने भाषण में कि बहुत सारे फिल्मकारों की फिल्में साहित्यिक ही हैं ज्यादातर। वो फिल्में कम हैं साहित्य ज्यादा हैं। है न और गीतों मे कुछ कहा गया कि गीतों में साहित्य नहीं है, गीतो में बहुत साहित्य हैं। ये अलग बात है कि साहिर लुधियानवी ने अपनी बहुत सारी शायरी जो थी उसमें जो टोन था उसको थोड़ा आसान बनाया। जो पढ़ता है वो साहित्य पढ़ता है, जो देखता है वो साहित्य पढ़ा हुआ हो ये जरूरी नहीं तो ये फर्क है न। सिनेमा ने वाकई हिन्दी को विस्तार दिया हैं उर्दु की शाखें हैं हमारे यहाँ ये एक बड़ी बात है, जैसे देवकी नंदन खत्री के उपन्यासों को पढ़ने के लिये एक जमाने में वो हिन्दी सिखते थे उसी तरह फिल्मों के जरिये उन्होनें हिन्दी सीखी है। देश में नहीं विदेश में और तो साहित्यिक फिल्में बनी हैं और ढेर सारी बनी है, वही मैं कहने की कोशिश कर रहा था अपने भाषण में इसमें ये चक्कर जरूर है की ख्वाजा अब्बास जैसे लेखक हैं वे ये कहते हैं कि ''देखियें जी कहानी मैनें लिखी है, बॉबी नाम की बॉबी फिल्म आप लोगों ने देखी है (डिम्पल कपाड़िया, ऋषि कपूर) तो उस फिल्म पर उपन्यास छाप दिया उन्होनें, अंग्रेजी में, अब आप लोग तय किजिये की राज कपूर क्या करता है मेरी कहानियों के साथ की वो हिट हो जाती हैं''।

पूजा राय
तृतीय वर्ष

कुशीनगर का संस्मरण

कुशीनगर उत्तर प्रदेश में है रामायण मे भगवान राम के पुत्र कुश की राजधानी कुशावती को पूर्व बुद्ध ने अपने अंतिम विश्राम के लिए कुशीनगर को चुना। शिक्षित लोगो का मानना है कि प्राचीन काल में इस स्थान का अत्यंत महत्व था कुशीनगर का सबसे बड़ा महत्व बौद्ध तीर्थ के रूप में है। कुशीनगर की सीमा में प्रवेश करते ही भव्य प्रवेशद्वार आपका स्वागत करता है इसके बाद आमतौर पर पर्यटकों की निगाह भगवान बुद्ध मंदिर की ओर पड़ती है वैसे दूर से ही दिखता है अपने आकर्षण के कारण ही सभी का मन मोह लेता है। कुशीनगर का महत्व महापरिनिर्वाण मंदिर से है। इस मंदिर की स्थापना मानो अजंता की गुफाओं से मालूम पड़ती है मंदिर के डाट हूबहू अजंता की गुफाओं की डाट की तरह हैं। इस मंदिर में भगवान बुद्ध की लेटी हुई लगभव 5 मीटर लंबी मूर्ति है जो लाल बालु मिट्टी की बनी है यह मूर्ति उसी स्थान पर बनायी गयी है जहाँ पर यह मूर्ति निकली थी मंदिर के पूर्व हिस्से में एक स्तूप है वहाँ पर भगवान बुद्ध का अंतिम संस्कार किया गया था। यह मर्ति भी अजंता के भगवान बुद्ध की मूर्ति से पूर्व की है ऐसा माना है। इस मंदिर के आसपास बौद्ध भिक्षुक रहा करते थे उनकी सुन्दर –सुन्दर मूतियाँ बनाई गई हैं। मंदिर के पास से हीं काफी बड़ा सा पार्क है जहाँ पर पर्यटकों का जमावड़ा लगा रहता है। वैसे तो उस जगह पर अलौकिक शांति का वातावरण है। उसके थोड़े ही दूर पर माथाकुँवर जी का मंदिर है वहाँ लोगो में भगवान विष्णु के अवतार होने की मान्यता भी प्रचलित है माथा कुँवर की मूर्ति काले पत्थर से बनी है। इस मंदिर को देखते ही मानो ये मंदिर पूरे सोने की बनी हुई है। महापरिनिर्वाण मंदिर के उतर दिशा में मौजूद जापानी मंदिर अपनी वास्तु के लिए प्रसिद्ध है। इसका नाम ही जापानी मंदिर रखा गया है। यह मंदिर अर्द्धगोलाकार मे है। इस मंदिर में भगवान बुद्ध की अष्टधातु की मूर्ति है। यह मंदिर सुबह 10 बजे से 4 बजे तक दर्शन के लिए खुला रहता है। और मंदिर के चार बड़े–बड़े द्वार है। जो सभी दिशाओ की ओर बनाए गए हैं। जापानी मंदिर के ठीक सामने संग्रहालय भी है। इसमें बुद्धकालीन वस्तुओं, कुशीनगर में खुदाई के दौरान पाई गई मूर्ति, सिक्के, बर्तन आदि देखने को मिलते है।

कुशीनगर में ही एक और मंदिर है जिसका नाम हमारे पूर्वजों ने चीनी मंदिर रखा है। इस मंदिर में भगवान बुद्ध की मूर्ति अपने पूरे स्वरूप में चीनी लगती । ऐसा देखने में लगता भी है। इसकी दीवारों पर जातक कथाओं से संबधित पेंटिग अत्यंत ही सुन्दर लगती है। मंदिर के बाहर एक सुंदर फव्वारा है। साथ ही लगा एक विहार जैसा है। महापरिनिर्वाण मंदिर के पहले बीच तालाब में बना है भगवान बुद्ध का मंदिर और इसके सामने बना है विशाल पुल जो पर्यटकों का आकर्षण है जल मंदिर जाने के लिए तालाब के ऊपर पुल का निर्माण किया गया है उस तालाब में बत्तख और मछलियाँ और कछुओं आदि सबको देखना अच्छा लगता है। कुशीनगर में ठहरने के लिए हर श्रेणी के आरामदायक होटल मौजूद हैं। यहाँ लोटस निक्को होटल आदि बहुत सारे होटल हैं पर ठहरने के लिए पहले से बुकिंग करनी पड़ती है। वहाँ धर्मशाला भी है। धर्मशालाओं में भी सालभर भीड़ रहती है इसमें भी दो धर्मशाला है। एक बिरला धर्मशाला और दूसरा बुद्ध धर्मशाला प्रमुख है।

निवेदिता चौरसिया
बी.ए. हिंदी विशेष
प्रथम वर्ष

एक फिल्म का व्यक्तिगत अनुभव

आज का आधुनिक समाज हर दिन के साथ जिस गति से बदलाव की सीढ़ियाँ चढ़ रहा है उसे ध्यान मे बिठा कर देख पाने का समय शायद ही किसी के पास हो। आदिकालीन समाज से आधुनिक काल तक मानव प्रजाति ने कितने विकास के उतार चढ़ाव देखें, शायद हीं किसी के पास इस सब का ब्यौरा हो। लेकिन एक तथ्य जो आदि काल से लेकर आधुनिक काल तक समान रहा है और वह है 'स्त्री और पुरूष'। दोनो समाज रूपी रथ के वे दो पहिये है जिसके बिना समाज का विकास असम्भव है। लेकिन पूराकाल के बजाय यदि हम आधुनिक काल की महिलाओं की स्थिति पर विचार करें तो एक तरफ आज की महिलाएं विकास की सीढ़ियाँ चढ़ती नज़र आती है तो दूसरी तरफ उसकी विद्रूप स्थिति पर बनी फिल्म Licstick under my burkha जैसी फिल्म है जो उसकी आज की विद्रूप स्थिति का सही तरीके से वर्णन करती है। इस Film को देखने के बाद नारी के जीवन के चार विशेष चरणों के बारे मे पता चलता है। और यहस फिल्म हमारे आज के समाज में महिलाओं की आजादी को जकड़ने वाली बेड़ियों पर किस हद तक वार करती है, इसका अंदाजा लगाया जा सकता है । फिल्म मे दिखाया गया है कि हमारे समाज में औरतों के दुखों की कहानी एक जैसी हीं है, फिर चाहे वह किसी भी धर्म को मानने वाली हो चाहे वह कुंवारी हो शादी शुदा हो या फिर उम्रदराज हो। फिल्म मे यह 4 प्रमुख पात्र है– कोंकणा सेन, राना पाठक, अहाना कुमार, प्लाविता फिल्म मे प्लाविता जींस और अपनी पसंद के कपड़े पहनने की लड़ाई लड़ रही है, कोंकणा स्वयं को सेक्स की मशीन समझने वाले पति से अपने पैरों पर खड़ी होने की लड़ाई लड़ती दिखी है। 'अहाना' फिल्म मे अपनी मर्जी से मुस्लिम जाति जिन्दगी की लड़की का किरदार कर रही है और रत्ना पाठक एक उम्रदराज औरत की भूमिका निभा रही है जो अपने सपनों के राजकुमार की तालाश में है। दरअसल ये चारों पात्र फिल्म मे फैंटसी को सच होते देखना चाहती हैं । फिल्म के एक सीन में एक लड़की कहती है ''हमारी गलती यह है कि हम सपने बहुत देखते हैं। दरअसल फिल्म लड़कियों और महिलाओं को उन सपनों को हकीकत में तब्दील करने का हौसला देती है फिर नतीजा चाहे जो हो।

फिल्म में एक ओर चीज जो मैंने देखी तो है Marital Rapes नारीवादी आंदोलन जब शुरू हुआ तब उसमें यह बात भ पेश की गई भ कि स्त्री के शरीर पर उसका अधिकार होना चाहिए। लेकिन भारत के संदर्भ में इस बात को देखे ता अभ भी इस देश की महिलाओं को Marital Rapes पर कोई अधिकार नहीं मिला है हमें Privacy का अधिकार, अभिव्यक्ति का अधिकार तो है लेकिन स्त्री के सदर्भ मे मानव अधिकार की भाषा इस देश में बिल्कुल उल्टा हैं। आरंभिक काल से ही इस देश की स्त्री को देवी को रूप मान लिया गया है। इसलिए शायद आज तक उसे एक मानव या मानवता के चश्में से नहीं देखा गया। और यदि Marital Rapes की बात करे तो यदि कोई स्त्री इसका विरोध भी करें तो भी उसकी आवाज काई नहीं सुनेगा। जिस प्रकार आजकल भीड़ मे खड़ा एक अकेला व्यक्ति नहीं पहचाना जा सकता किसी मन मे क्या दोष, कौन मानसिक रूप से असंतोष है, कुछ भी नहीं पता चलता। ठीक उसी प्रकार एक स्त्री की वेदना है। मंडलीकरण के इस दौर में हमने विदेशी सभ्यता की अच्छाइयों के बजाए सारी बुराइयों को अपना रखा है इसलिए शायद इस देश की स्त्रियाँ, एवं जनता ज्यादा त्रस्त है।

अतः यह फिल्म स्त्री के साथ दोहरे व्यवहार एवं Marital Rapes की पैरवी करती है। और इस फिल्म को देखने के बाद मेरा अनुभव यही कहता है कि शायद हम औरतों को य महिलाओं या फिर आज की नारी को दुख दो–तीन कई खाईयाँ अभी पार करनी बाकी है।

इसके अतिरिक्त यह फिल्म एक औरत के जीवन की Fontasy को भी विश्लेषित करती है और Fantasy औरतों के लिए हमारे समाज में वैश्या गालियों इत्यदि शब्दो को भी प्रचलन है इसका सीधा अर्थ यही निकलता है कि औरतों को अपनी जिंदगी अपने मुताबिक जीने का अधिकार आज भी बहुत कम देखने को मिलता है। जब की बात है कि जिस समाज मे औरत को दैवी के समान पूजा जाता है वही समाज उसके मानव अधिकोरो को छीनता है मेरी माँ मूझे बताती है कि जो औरते शुरूआती फिल्मों के दशकों मे हीरोईनों या अन्य किरदार निभाती थी, उन्हे ग्रामीण या निम्न समाज अपशब्दो के घेरे में रख देते थे। और महादेवी वर्मा ने भी आदि कालीन समाज की नारी की समस्या होगी, वह आधुनिककालीन महिलाओं की स्थिति विकट बना देगी।

जब मैंने अपने कॉलेज के Auditorium मे इस फिल्म को देखा तो इस फिल्म के हर दमदार संवाद के साथ मेरे चारो ओर बैठी मेरी ही जैसे हर लड़की की अंदर की आवाज को एक साथ उन सबकी अंर्तात्मा को पहली बार उस दिन स्पर्श किया था। मैंने उस समय दूसरी दुनिया का सिर्फ एक हिस्सा देखा। उस समय उस दिन मैंने नारी शक्ति का केवल एक अंश मात्र देखा जो मेरी यादों में हमेशा जीता–जागता रहेगा।

मैं यदि इस फिल्म को किसी और को देखने के लिए कहूँगी तो शायद मैं उनकी नजरों में बुरी बन जाऊगीं क्योकि आज के 90% लोग भारतीय फिल्में केवल मनोरंजन के उद्देश्य से देखते हैं मानवता की दृष्टि से नहीं।

फिल्म के देखने के दौरान मेरे हाथ–पैर बहुत ठंडे पड़ रहे थे, दिल की धड़कने तेज हो गई थीं और हर गुजरते सीन के साथ मेरा मन मुझसे कहता कि अरे ये मैंने क्या देख लिया सीमा मुझसे कहीं बहुत बड़ा पाप तो नहीं हो गया। लेकिन मेरी मानवतावादी दृष्टि ने हीं मुझे संभाला। फिल्म को देखने के बाद एक प्रश्न भी उमड़ता है कि आज की भारतीय नारी की स्थिति इतनी विकट क्यों है? इसका उत्तर है 'उत्तर –वैदिककाल। यही वही काल था जब स्त्री घर की चार दीवारी मे बंद हो गई और धीरे–धीरे संपत्ति में गिनी जाने लगी। लेकिन आज भी उसे बचाने की बात की जाती है। इस काल से पहले की स्त्री आज के बजाय कहीं गुना ज्यादा आजाद थी। लेकिन आज की स्त्री की आवाज को जागृत करने वाली यह फिल्म उत्कृष्ट श्रेणी की है।

रूमा मंडल
तृतीय वर्ष
हिन्दी विशेष

विश्व पुस्तक मेला एक अनुभव

कहाँ से आरंभ करूँ यह तो पता नहीं मगर में उन पहलूओं को छोड़ भी तो नहीं सकती वैसे तो कक्षा मे चार–पांच दिन पहले ही यह घोषणा कर दी गई थी कि 10 जनवरी को पूरे तृतीय सत्र विश्व पुस्तक मेला जायेगा इस खुशी की बात को सुनकर मेरे आस–पास लड़कियों के चेहरे जगमगा गए थे। यहाँ तक मेरा भी चेहरा उन्हीं चेहरों में शामिल था। विश्व पुस्तक मेला देखने का यह सौभाग्य मुझे प्रथम बार मिला वह भी अपनी पूरी कक्षा के साथ। कल की सुबह को तो होना नही ही था हर बार कि तरह में दिए गए समय से पहले ही पहुँच जाती हूँ यह तो मेरी शुरूवाती आदत है और फिर आज तो एक विशेष दिन था तो इसमें कैसे में लेट आती मैं कॉलेज पहुँची तो देखा कि काफी लड़कियाँ आ चुकी थीं आज का दिन हिंदी विशेष की छात्राओं का उत्सव का दिन नज़र आ रहा था होता भी कैसे नहीं कॉलेज में आखिरी साल जो है हमारा। विश्व पुस्तक मेले में जाने को अनुभव बहुत ही उमदा था ऐसा लग रहा था जैसे कोई मेरे अंदर छुपे ज्ञान पर किसी ने प्रकाश डाला हो। वहाँ पर मेरा मन जितना किताबों के प्रति आर्कषित था उतना और किसी के प्रति नहीं। मन को लुभाती वो किताबों की स्टाले अपनी और खीचतें जा रहे थे मेरे मन तो शुरूआती तौर पर ही विचारना शुरू कर दिया था कि क्या और कौन सी पुस्तकें ली जायेगी, किंतु यह क्या कहा गई वो विचारना यहाँ तो मेरा मन चुनाव ही नहीं कर पा रहा था किसी भी पुस्तक का मगर हार कर किसी पुस्तक पर तो टिकना था, वहां कई स्टाले थी उन स्टालों के भीतर भिन्न–भिन्न प्रकार का ज्ञान छुपा था बस देरी थी उसे पढ़ने की हर किताब का विषय था अलग–अलग था संस्कृति से जुड़ता हुआ तथा वहाँ पर उभरे हुए नए लेखकों तथा कवियों की भी रचाना का शामिल किया गया था और सभी प्रसिद्ध लेखकों की रचनाएँ तो स्टाल की शोभा बढ़ा रही थी काफ़ी सारे प्रकाशन वहा थे जैसेः – वाणी प्रकाशन, स्वराज प्रकाशन, श्याम प्रकाशन, अखिल भारतीय हिंदी प्रकाशन, अंतिका प्रकाशन, प्रतियोगी दर्पण अमर प्रकाशन आदि इनमें से मैंने कई प्रकाशनों की किताबों को पढ़ रखी है वहाँ पर हमने काफी सारी फोटो खीचवायीं जो कि हमारे स्मृति पटल पर हमारी यादों को ताजा करती रहेगी, कितना अच्छा लगता है ना जब कोई किताब का नाम आपके नाम पर हो ऐसी ही एक किताब पर मेरी नज़र गई जिसका नाम था गोमा हँसती है यह नाम मेरे साथ मे पढ़ने वाली हमेशा खुश रहने वाली लड़की का नाम है जो कि उस किताब के शीर्षक की तरह हंसती रहती है और हँसाती रहती है

विश्व पुस्तक मेले को सफ़र बहुत है रोमांच से भरा था और अंतिम विदाई का अच्छा उपहार था।

लीना
तृतीय वर्ष
हिंदी विभाग

स्त्री होने को एक अनुभव

जिस सदी मे मैं जी रही हूँ वह सदी विमर्श की है मुझे तो अपने आस–पास इतने सारे विमर्श दिखाई दे जाते हैं जिस पर चर्चा करने बैठू तो ये जन्म कम लगता हैं अभी कल की ही तो बात थी। बस में बैठे–बैठे मैं विमर्शों से घिर गई थी मेरे पीछे वाले सीट पर एक विवाहित स्त्री तथा उस पर दो बच्चे बैठे थे और मेरी बगल वाली सीट पर एक वृद्ध महिला बैठी थी, जो कि मेरे ख्याल से उस विवाहित स्त्री की सास थी। उनकी बातों से पता चला कि उस स्त्री का नाम शीला है बस अपनी गति से चल रहीं थी कुछ चढ़ रहे थे तो कुछ उतर रहे थे, सहसा मेरा ध्यान उन बच्चों की लड़ाई पर गया, जो कि केवल इस लिये लड़ रहे थे कि ''मम्मी की गोदी में बैठुगा'' या बैठुगी, वहीं से स्त्री विमर्श की कहानी आंरभ होती है। माँ ने अपने सात वर्ष के बेटे को कहा कि लड़के कभी जिद नहीं करते। जिद तो लड़कियाँ करती हैं, दादी ने पोते को अपने पास बुलाकर कहाँ कि आ मेरे राजा बेटा दादी की गोद में बैठेगा, उसे अपनी गोदी में बिठाते हुए कहा कि नालायक रोने लगा लड़कियों की तरह कभी देखा है लड़को को रोते हुए। उसे बैठने दें अपनी महतारी के पास, बच्चा अभी भी सुबक रहा था और मेरे मन में एक प्रश्न दौड़ रहा था मन कर रहा था कि उस प्रश्न को उसी वक्त में समाप्त करके आऊं किंतु यह हो ना सका, कौन बनाता है यह नियम कि लड़का हसेगा और लड़की रोयेगी। भगवान ने हर किसी को संवेदनाएँ दी हैं और वो सवेदनाएँ कभी–कभी आँसू के रूप में भी परिवर्तित हो जाती हैं, हमारे समाज की इस दकियानूसी सोच और इस प्रकार के नियमों से एक भी व्यक्ति का भला नहीं होता है फिर भी हम ऐसे नियमों को क्यों कंधो पर बोझ कि तरह ढ़ोते आ रहे हैं। ???....

लीना
हिन्दी विशेष
तृतीय वर्ष

वक्त नहीं

हर खुशी हैं लोगों के दामन में,
पर हँसी के लिए वक्त नहीं।
दिन रात दौड़ती दुनिया में
जिन्दगी के लिए वक्त नहीं।

माँ की लोरी का अहसास तो हैं
पर माँ को माँ कहने का वक्त नहीं।
सारे रिश्तों को तो हम मार चुकें,
अब उन्हें दफनाने का भी वक्त नहीं।

सारे नाम मोबाईल में हैं
पर दोस्ती के लिए वक्त नहीं।
गैरों की क्या बात करें
जब अपनों के लिए है वक्त नहीं।।

आंखो में है नींद बड़ी,
पर सोने का वक्त नहीं।
दिल हैं गमों से भरा हुआ,
पर रोने का भी वक्त नहीं।

पैसों की दौड़ में ऐसे दौड़े,
कि थकने का भी वक्त नहीं।
पराए अहसासों की क्या कद्र करें।
जब अपने सपनों के लिए वक्त नहीं।
तू ही बता ए जिन्दगी, इस जिन्दगी का क्या होगा
कि हर पल मरने वालों को जीने के लिए भी वक्त नहीं

पहला दिन

चढ़ा था बुख़ार कॉलेज का
सुनाऊँ मैं पहला दिन इसका
कमला नेहरू में हुआ मेरा दाखिला
मन में उत्साह उमग गर्व था
इस महान विद्यालय में हुआ दाखिला।

आया पहला दिन कॉलेज का
मेरा हाल—बुराहाल था
सोच यह क्या होगा हाल मेरा,
सोच यह क्या होगा कॉलेज में
कैसे पढ़ूँगी वहाँ मैं,

डरी, सहमी प्रवेश किया
सारा डर गायब हुआ
देख इस विद्या के मंदिर को
मन अंचभित हो उठा
हर्ष उल्लास जगा,
मन पुलकित हो उठा।

चारों ओर छात्र ही छात्र
करने आए अपने संपनों को साकार
देख उन्हें लगी मैं सोचने
कहाँ मेरी अध्यापिका ? कहाँ मेरी कक्षा

कहाँ जाऊँ क्या पता? मैनें सोचा
फिर एक सहेली मिली
उस देख मिली खुशी
दोनों ने मिलकर कक्षा खोजी
मिल गई कक्षा, मिल गई अध्यापिका,
अध्यापिका ने प्यार से बुलाया परिचय सुनाया

ऐसा लगा कक्षा में जग था समाया
कई अध्यापिका कई छात्र
सोचा बार—बार
यही होता है कॉलेज का बुखार
उतरा बुखार आ गए दिन
शुरू हुई पढ़ाई अगले दिन।

ज्योति राना
(प्रथम वर्ष)
हिन्दी विशेष

मैंने खुबसूरती को देखा

मैंने खुबसूरती को देखा हैं,
पृथ्वी की प्रकृति में
पेड़ो में पौधों में,
नदियों की एक–एक बूँदों में
पेड़ पहाड़ों के टूटे पत्थरों में,
पत्तों से झलकती ओस में,
नदियों के किनारे बैठे उस शांति में
आकाश से बरसते अमृत रूपी जल में
इन चिड़ियाँ की चहचहाट में
मैनें खुबसूरती को देखा हैं
फिर भी कितना खूबसूरत होता हैं
माँ की गोद में, माँ की सुनाई गई उन मीठी लोरियों में,
शरारत में बीते बचपन में,
बड़ों की प्यार भरी डाँट में
माँ बच्चे से निर्मित भावनाओं के जाल में,
मैनें खुबसूरती को देखा हैं
उस शांत बैठी चिड़ियाँ में
फूलों पे बैठे भवरों मे,
कोकिला के कष्ठ में,
मोर के रंग–बिरगें रंगो में
मैनें खुबसूरती को देखा हैं
की जुल्फों की लटों में,
झील भरी आँखों में
कड़ाके की ठण्ड में
ठण्ड की ओस में
वर्षा ऋतु फूलों–पत्तियों में,
बरसात की बौछारों में,
मैनें खुबसूरती को देखा हैं
फिर भी मानों मन नहीं भरता
इस खूबसूरती से
मन करता है बार–बार देखों इस खुबसूरती को
क्योंकि मैनें खुबसूरती को देखा हैं
इस वतन की मिट्टी में,
फूलों की पँखुड़ियों मे खुशबू में,
प्रीति की भावना में,
जमी पर रेंगते कीटों में, जल में निर्मित जीवों में
चलते कदमों की उड़ती धूलों में,
दीपक के उजाले में,
मैनें खुबसूरती को देखा हैं

माँ

समझ नहीं थी मुझे दुनिया की
माँ ने मुझे समझदारी सिखाई।
आधी रात को डरकर उठती थी मैं
सहलाकार , बहलाकर मीठी नींद माँ ने बुलाई।
ज्ञान की कमी थी मुझमें
माँ से बनी गुरू सी एक ठण्डी तार मन में।
बुरी लिखावट को भी माँ ने सुदंर बताया
हाथ पकड़ कर मेरा मुझे लेखक बनाया।
चलते –चलते गिर जाती थी
पर माँ ने मुझे गोदी में झुलाया।
दुनिया ने मतलब का व्यवहार किया
पर माँ ने मुझसे प्यार किया
जीवन कठिनाईयों से भरा था
पर माँ के चेहरे पर सरलता सी मुस्कान थी।
दुनिया की इस बगिया में दोस्त की कमी थी
लेकिन एक सहारा था जो दोस्त के समान था

रबड़

घिस–घिस के कितना घिसोगे मुझे
मेरी सहन शक्ति पर संदेह हैं तुम्हें
जब संदेह ही था तो क्यों चुना मुझे
वो हाथों की मजबूरियाँ ही रही होगी
कैसी बैबसी हैं ये जो अपनी ही लिखावट को मिटाना पड़ा।

रबड़ ने भी दिया साथ मेरा जो
मेरी कमजोरी, डर, बनावट, आंडबर, सजावट को
सजोट समेटकर पल में मिटाया था।
क्यूँ था इतना विश्वास एक वस्तु और इन्सान
क्या था रबड़ को भी इंतज़ार था किसी का
जो उसे पेंसिल से मिलने की मनोकामना पूरी करता
इन्सान –इन्सान की गलती न मिटा पाया।
जो एक रबड़ सी वस्तु ने कर दिखाया।
रबड़ को थामने की लिए वो हाथों में भी कपकपाहट थी।

कैसी ये परिस्थिति थी।
क्यों रबड़ ने इन्सान को ही अपना सहारा समझता
इन्सान को भरोसा इन्सान से उठ गया पर क्या पता
रबड़ को अपना सहारा मिल गया।
वस्तु और इन्सान को एक–दूसरे में वो रोशनी की
दिखाई दी जो इन्सान को ....
सूरज में भी नहीं दिखाई दी।
वो बूँद की एकता दिखाई दी जो
समुद्र की विशेषता थी।
क्या ऐसे रिश्ते को नाम देना जरूरी हैं जब
मदद के रिश्ते को लोग नाम नहीं दे पाएं।
पन्ने काग़ज भी कितने भाग्यशाली थे जो रबड़ ने सजाया।
शायद उसे पेंसिल से मिलने के लिए बैचेन थी
उसकी मिलने की मनोकामना थी जो पूरी हुई।

पूजा सैनी
हिंदी विशेष
द्वितीय वर्ष

अजनबी

गलियाँ वहीं है
पर, समय बदल गया है।
विश्वास कीं सुना सा शब्द लगता है
रिश्ते कच्चे धागों से बुना सा शब्द लगता है
आहटें अब नहीं आती
आवाजें सदियों की बात लगती हैं
घरों में दिखते है सिर्फ दरवाजे
मुसकुराहट उसमें कहीं बंद लगती हैं
यूँ तो उनसे एक अरसे से रोज मिलती हूँ
पर बातें अब कम ही होती है
बातें मुलाकातें सिलसिला चलता रहता था
रिश्ते के बंधन के बाद वे स्वयं को बेहतर दिखते हैं
सच्चाई स्वीकारने से कतराते हुए हर जगह
मुझे कमतर ठहराते हैं।
पर...
हर रोज में उनसे एक कदम आगे
बढ़कर दिखाती हूँ
वो मुझे कम ठहराएँ इससे पहले
मैं उन्हें कमतर दिखाती हूँ
हमें बराबरी का अधिकार है।
क्या यही कारण हमारे बीच तकरार है
हर रोज एक ही छत के नीचे
हम अजनबी बनकर जीते है
प्रेम के बाद भी, ईर्ष्या का घूँट पीते हैं
दिल मे प्यार हैं
सामने तकरार है
क्योंकि हाँ, मुझे बराबरी का, मुझे अधिकार है।
वो कभी मुस्कुराता है
तो कभी पलकें झुकाता है
मुझसे ंनज़रे तो मिलाता है
पर थोड़ा कतराता हैं
और इश्क को मेरे
मेरी नासमझी बताता है
या शाायद....
इज़हार करने से घबराता है
धड़कन तो आज भी उसकी
महसूस हो जाती है मुझे
और वो छुप के
निकल जाने का बहाना बनाता है
उसे समय का फासला कहूँ
या उम्र का
जो मेरी दो लफ्ज़ों की कहानी को
ज़रा मुश्किल बताता हैं
फिर भी जाने क्यों
मित्र मेरा मुझे देखकर
उसके आने से मुस्कुराता है।
वो जब मुस्कुराता है
तो दिल थम जाता है।

दीपिका दीक्षित
हिन्दी विशेष
तृतीय वर्ष

तेरी गुनहगार

कितनी खुश थी मैं उस दिन
जिस दिन मैंने तेरे आने की आहट भर सुनी
लगा था जैसे एक साथ कई कलियाँ

मेरे आँगन में है खिली
कितनी खुश थी मैं उस दिन
जब पहली बार तू मेरी ऊँगली पकड़ कर चली।
लगा था जैसे दुनिया भर की हर खुशी
मुझे ही मिली।
कितनी खुश थी मैं उस दिन
जब तूने पहली बार मुझे पुकार
लगा था जैसे कोयल ने है किलकार
कितनी खुश भी मैं उस दिन
जब तूने मुझे प्यार से था निहारा,
लगा था जैसे समा गया हो मेरा जीवन
तुझमें ही सारा।।

कितनी खुश थी मैं उस दिन जब तूने।
पहली बार आँगन से बाहर रखे थे कदम,
लगा था जैसे कभी मेरे द्वारा देखे गए
सपनों का तू ही है मरहम।।
कहाँ गयी आज मेरी वों खुशी
मैं कैसे बताऊँ।
अपने दिल की व्यथा को मैं आप तक कैसे पहुचाऊँ।
न जाने वो कौन सी घड़ी थी
मैने ही कहा था
तू भी बाहर की दुनिया देख कर आ
पर शायद में जान कर भी अनजान थी
कि बापू –नेहरू की दुनिया में
महिलाओं की अब क्या पहचान थी।
आज भी मुझे बहुत पुकार
पर चाह कर भी बन न पाई
मैं तेरा सहारा।।

तू और जीना–चाहती है, तूने मुझसे कहा था।
पर तूझे बचाने के लिए मेरे पास अब
बाकी ही क्या रहा था।।

उन दरिन्दों के खिलाफ मैंने आवाज़ भी न उठाई।
शायद इसी गुनाह की सजा मैंने पाई।।
जब तूने पहली बार मुझसे यह कहा था
तभी मैं तूझे समझाने की बजाय खुद समझ जाती हूँ
तो शायद मुझे तेरी इतनी याद न आती
ओर मैं खुद को तेरा गुनहगार न पाती।।

दीपिका दिक्षित
बी.ए. हिंदी विशेष
तृतीय वर्ष

रोक लूँगी

अगर मुझे कोई कहे कि मेरी जिन्दगी
किसी और की लेखनी है...
अगर परत–दर किसी ने हटाने
हटाने की कोशिश की...
तो मैं उस बढ़ते हुए कदम को रोक लूँगी।
चुप हूँ तो सोचते हो असहाय हूँ
तुम बोल के तो देखो...
तुम्हारी जुबान से निकले हर एक अल्फाज को रोक लूँगी।

हर बार इल्जाम हमें ही देना अच्छा नहीं
कुछ कमियां तो तुम में भी है...
तुम आवाज तो उठाओ
मैं बढ़ते हुए आक्रोश को रोक लूँगी।

साथ चलने का हुनर है तो शौक से चलो
लेकिन याद रखना पीछे हटे तो...
जिन्दगानी के नए मोड़ का आगाज रोक लुँगी।
साथ आकर पछता तो नहीं रहे?
खैर छोड़ो...
जाने भी दो..
मेरा तो सफर ही यही है
मैं इस समाज में बढ़ रहें
जुल्मों सितम को रोक लुँगी।

नाम : आफरीन
बी.ए. हिन्दी विशेष
तृतीय वष)

अच्छा होता पर हुआ नहीं

बाबा...
तारा हूँ न आँखों का
कुछ पल और सँवर जाने देते तो अच्छा हीं होता
चिड़ियाँ हूँ न आँगन की
कुछ दिन और चटक जाने देते तो अच्छा होता।
ना समझ कहते हो न
कुछ और समझ लेने देते तो अच्छा होता।
सबको खुश करने का हूनर तो खूब दिया
थोड़ा मुझे मुस्करा लेने देते तो अच्छा होता।
घर सवारने की हिदायत तो खूब दी
बाहर के सफर में भी साथ आ जाते तो अच्छा होता।

समाज की परवाह तो खूब करते हो
मेरे विचारों को भी भांप लेते तो अच्छा होता।

वो मैं बालों को बांधती थी न बाबा...
वो सिर्फ मेरी चोटी ही नहीं थी
बल्कि वो घर की एकता की प्रतीक थी
ये बात आप पहले समझ जाते तो अच्छा होता।
मेरे गले में दुपट्टा तो सब है...
इसका परचम बना लेने देते तो अच्छा होता।
क्या दूँ मैं सभी के सवालों के जबाब?
बस यही कहना है...
कुछ दिन और ठहर जाने देते तो अच्छा होता।

आफरीन
बी.ए. हिन्दी विशेष
तृतीय वर्ष

आधुनिक नारी और माँ

बढ़ रहे है कदम मेरे
फिर भी कहीं दबी हुँ
उड़ रही हूँ खुले आसमा में
फिर भी सदा ठगी हूँ।।
ढलता है चांद अब भी
निकलता सूरज भी है
फर्क इतना है बस
देख सकती हूँ रोशनी में अब
नहीं झुकते वो तो मैं भी नहीं झुकुँगी।
नारी हूँ अपना सम्मान स्वयं करूँगी
इस झुकने –झुकाने के चलते ही
अलग हो गए है मुझसे वो
फर्क बस इतना है साथ भी पहले मैं
पर अब है कोई और
क्या दूसरा घर बसाने को, हक मुझे नहीं है।
पूछती हूँ समाज से, क्या मुझमें मनुष्य नहीं है।।
पर जाती हूँ डर, करके विचार मैं ये।
क्या होगा नन्हें बन्टी का, आखिर
क्या है उसका कसूर।
पापा हो गए है उससे दूर अगर
मै भी हो जाऊँगी दूर
तो यह गम उसके लिए बन जाएगा नासूर
हाँ... हाँ
पर माँ ही नहीं मनुष्य भी हूँ मैं।
पूछती हूँ आपसे मैं,
क्या है नहीं जीवन मेरा, क्या है नहीं
मेरी आशाएँ
यदि गलत है चाहना, कुछ खुद के लिए
तो आप मुझे गलत ही ठहराए
माँ, बहन, पत्नि ही नहीं, मनुष्य भी हूँ मैं।
समझते हो इसे स्वार्थ तुम,
तो स्वार्थ हूँ मैं।
पर आपको मैं कैसे बतलाऊँ
अपनी मनुष्यता से कैसे रूबरू कराऊ?

दीपिका दीक्षित
हिन्दी (ऑनर्स)
तृतीय वर्ष

बचपन

काश मेरा वो प्यारा बचपन लौट आता
माँ की गोद मे मेरा बचपना फिर से खिलखिलाता।
काश फिर वहीं ममता की के आँचल
में जीवन सिमट जाता
मेरे बिन बोले सारी बातें मेरी माँ का समझ जाना।
बचपन के कहीं खेल–खिलौनों का याद आना।
वह आँचल की ठंडी छाया वो माँ के
हाथों से खाना, और फिर चैन से माँ की गोद में सो
जाना।
मुझे थोड़ी सी चोट लग जाने पर,
माँ की आँखो में आँसू आ जाना।
मुझे तकलीफ़ होने पर माँ का यूँ तड़प जाना।
मैं जब रूंठूँ तो मुझे प्यार से मनाना
मेरी एक मुस्कान पर माँ को
दुनिया की खुशी मिल जाना।
काश मेरा वो प्यारा बचपन लौट आता
माँ की गोद में मेरा बचपन
फिर से खिलखिलाता।

जैनब खान
(हिन्दी विशेष)
तृतीय वर्ष

वक्त

घर बनाने में वक्त लगता है
पर मिटाने में वक्त नहीं लगता।
दोस्ती बड़ी मुश्किल से बनती है
पर दुश्मनी में वक्त नहीं लगता
गुज़र जाती है उम्र रिश्ते बनाने में
पर बिगड़ने में वक्त नहीं लगता
जो कमाता हैं महीनों में आदमी
उसे गंवाने में वक्त नहीं लगता
पल–पल कर उम्र पाती है जिन्दगी
पर मिट जाने में वक्त नहीं लगता
जो उड़ते हैं अहम के आसमानों में
जमीं पर आने में वक्त नहीं लगता
हर तरह का वक्त आता हैं जिन्दगी में
वक्त के गुजरते वक्त नहीं लगता

जयन्ती लोहिया
हिन्दी विभाग

सुख-दुःख

विधाता सुख–दुःख देने वालें हैं।
हम जन दोनों सहने वाले हैं।
जीवन सुख–दुःख का तो चक्र है।
यहीं जीवन का तो सत्य है।
जब तक शरीर में दुर्बलता है।
तब तक दुःख से सुख, सुख में ममता है
सुख से जगत हर्षित रहता है।
दुःख में जगत दुःखी रहता है।
जग पीड़ित है अति दुःख से
जब पीड़ित है अति सुख से,
मानव जग में बटँ जाएँ
दुःख सुख से और सुख दुःख से।
जीवन में सुख भी तो है दुःख भी है।
सुख है तो सुख की कीमत भी है।
दुःख है तो दुःख में हिम्मत भी है।
सुख और दुःख दोनों सहमत भी है।
सुख जल्दी जीवन में छिपता नहीं
दुःख जल्दी जीवन से हटता नहीं
जीवन में सुख मिलना भाग्य की बात नहीं
जीवन में दुःख मिलना मृत्यु की बात नहीं
मानो तो हमारा जीवन यही है।
कहीं सुख है, तो कहीं दुःख है।
हमें तो बस मंजिल तक पहुँचना है
चाहे दुःख हो, चाहे सुख हो उसको हटाना है।
जीवन रूपी चादर में सुख–दुःख तो ताना बाना है।
इसमें जितना खेद आना है, उतना हर्ष भी आना है।
क्यों होते हो इतना विचलित, इस दुनिया में आकर,
सब कुछ करते ऊपर वाले जो उसमे.......................

निवेदता चौरसिया
बी.ए. हिंदी (विशेष)
प्रथम वर्ष

क्या होती है दोस्ती?

दो दोस्त....। पक्षी के दो पंखों की तरह होते हैं जिनका साथ उड़ान है। दो दोस्त...।
नदी और किनारे?
की तरह होते हैं जो एक – दूसरे का साथ कभी नहीं छोड़ते । दो दोस्त जितना एक दूसरे को समझने की कोशिश करते हैं उतना ही वे खुद को जान पाते हैं और खुद ही हम दोस्ती को सँवारते भी हैं। दोस्ती एक अहसास हैं या कुछ और पता नहीं, लेकिन हाँ, ये सबके लिए बहुत खास हैं।

कनिका मित्तल
हिंदी (विशेष)
प्रथम वर्ष

बचपन

छोड़ दे ये जवानी की महफिल, इस महफिल का मजा कहाँ है
छोड़ चुके वो बचपन जिसका नशा अब कहाँ है
वो प्यारी सी मुस्कान, न सही गलत की पहचान
वो बचपन ही कितना सुनहरा था जो था नादान
वो बचपन के कीमती पल, जिसके बदले ये पूरा जहाँ है
छोड़ दे ये जवानी की महफिल, इस महफिल का मजा कहाँ है
छोड़ चुकें वो बचपन जिसका नशा अब कहाँ है
वो मौसम सुहाना और दिल का तराना था
छूट गया वो बचपन जिसका भी एक जमाना था
बचपन में रिश्तो की जो अहमियत थी, वो आज कहाँ है
छोड़ दे ये जवानी की महफिल, इस महफिल का मजा कहाँ है
छोड़ चुके वो बचपन जिसका नशा अब कहाँ है
साथ में शब्द में अहम है पराएँ ज्यादा और अपने कम हैं
पहले साथ मिलकर हसँते थे, आज हम पर हसँने वाले सब है
बचपन की हँसी तो स्वच्छंद थी, आज इंसान खुलकर हँसता कहाँ है
छोड़ दे ये जवानी की महफिल, इस महफिल का मजा कहाँ है
छोड़ चुके वो बचपन जिसका नशा अब कहाँ है
वो उम्र ही तो थी चली गई, पर मासूमियत मुझमें आज भी है
वो याद ही तो है जो रह गई, जिसकी खुशी आँखो में आज भी है
वो बचपन का चैन जो खिलौने मिलने पर आता था, आज वो चैन
आसानी से मिलता कहाँ है
छोड़ दे ये जवानी की महफिल, इस महफिल का मजा कहाँ है
छोड़ चुके वो बचपन जिसका नशा अब कहां है

पायल
हिंदी विशेष
द्वितीय वर्ष

वो रात

मेरी आबरू से खेले
वो हैवान
मैं रोई चिल्लाई
मगर मेरी आवाज
भगवान तक भी नहीं
पहुँच पाई
क्या गलती थी मेरी
मैं निकली थी रात को
दुनिया ने तो यही कहा
बस में हुआ समूह बलात्कार
छप गए अखबार
न्याय की लगायी गुहार
इतना होने के बाद
सबूत चाहिए आपको
वो बस गवाह हैं मेरी
किस तरह मेरे
शरीर को नोचा गया
उससे भी मन नहीं भरा तो
लोहे की रोड से
शरीर के अंदर तक
झकझोर दिया गया
फिर न्यायालय मे पूछते
क्या किया??

लीना
हिंदी विशेष
तृतीय वर्ष

टूट के ना गिर जाऊँ

टूट के ना गिर जाऊँ
जैसे माला के मोती
टूट के बिखर जाते हैं
उसी तरह टूट के ना गिर जाऊँ
कही मैं टूट के एक
जगह स्थिर ना हो जाऊँ
दिल से लगाके
गले में सजाके
धागे से पिरोके
वो श्वेत मोतियों
का हार जो तुमने
गले में सजाया था
तब भी भय था मुझको
के टूट के बिखर के
मैं कही गिर ना जाऊँ
मुझे पता नहीं था
कि मेरे बोल सच में
भी परिवर्वित हो जायेंगे
बिखरे हुए मोती फिर
एक जगह स्थिर हो जायेंगे।

लीना
हिंदी विशेष
तृतीय वर्ष

बुरखे से झांकती आँखें

कैद हूँ मैं आज भी,
बुरखे के लिवास में
कहीं छलकते आँसू हैं,
कहीं दर्द और पीड़ा भी,
मैं पली बड़े नाजो से,
जैसे गुलाब पौधे में खिलता है,
अर्पित होना नियति है उसकी
फिर भी मुस्कराती हूँ उस गुलाब की तरह,
कभी पूछती हूँ मेरे उन रखवालों से
जिन्होंने कर दिया हैं मुझे सीमित मुझ तक।
धर्म की बेड़ियों में पा जाती हूँ खुद को
कभी उस खुदा का सजदा करती हूँ।
बेअदबी में भी अदब दिखा दी जाती हैं मुझे
मैं सिमट कर आँखे मूँद लेती हूँ,
मुस्कुराहट का पहरा बुरखे में भी रहता हैं
किंतु आँखे तभी भी मौन नहीं बैठती।
ओझल हो जाता हैं वो हर एक मोती,
मेरी इन आँखो की नदियों से
मैं खुद को उस समुद्र में डूबते पाती हूँ।
पूछती हैं मेंरी आँखे हर क्षण कि क्या मैं आजाद
परिंदा हूँ।
मैं मौन हो जाती हूँ अक्सर यह कहकर कि
जीवन की नियति है यह,
धर्म की बेड़िया नहीं।
आँखें बोल उठीं मेरी...
क्या नायाब झूठ बोला मेरे शब्दों ने,
मैं निशब्द थी शायद तब भी।
मेरी आँखे बुरके से शब्दों का बाण लगा रही
थीं,
मैं धीरे–धीरे शब्द बटोर रहीं थी
मन के भीतर...
मैं विस्तृत कर रहीं थीं
अपने शब्दों को
समाज के प्रहरियों ने
हमारी खामोशी मे गुनाह ढूँढ़ निकाले,
मैं बेबस चीख रही थी,
नहीं नहीं मेरी आँखे चीख रही थी।
मैं तो निशब्द, मौन थी।
मेरा बुरखे से चेहरा दिखाना
प्रतिबंध था....
हो भी क्यों ना, धर्म के ठेकेदार बैठे थे,
मेरे बुरके के अंदर
मेरा निर्णय करने हेतु....
कल्पित स्वर में उठी, चीखी नहीं...
केवल यह समझना चाहती थी...
कि मैं इस लिवास में कैद हूँ लेकिन क्या...
सुरक्षित हूँ ? इसलिए....
लेकिन मेरे जैसे कई बुरखे चिल्ला रहे थे,
स्वतंत्र होने के लिए आज भी चिल्ला रहे हैं,
अरे!! नहीं नहीं....
यह तो केवल आँखे हैं....
जो पूरा संसार देख रही हैं....
इन आँखो से ....
कान, होंठ, कंठ सब परस्पर
ताक में हैं एक साथ विश्व को देखने की,
किंतु धर्म की बेड़िया हार जातीं काश...
इन नज़रों के सामने
सभी स्वतंत्र हैं यहाँ, पशु भी....
तो क्या मैं परतंत्र हूँ....
क्योंकि मैं स्त्री हूँ,
लेकिन धर्म तो स्त्री को पूज्य मानता हैं न,
फिर ये झूठे आडंबर किस कारण...
यथावत मेरी नज़रें ही निशब्द हो गई...
सुरक्षित तो मैं बुरखे के भीतर भी नहीं...
फिर क्या मुक्कमल करना चाहती हैं,
मेरी यह आँखे...
मेरी पीड़ा, संवेदना को क्यों मुखरित करना

चाहती हैं ये
मैं इसके भीतर अपनी मुस्कुराहट के पीछे, ओढ़े
बैठी हूँ कई प्रश्नों की चादर.....
क्या यह ही पूर्ण नहीं.....
अरे! बस आज मेरा भी अस्तित्व हैं...
मैनें कहा............
नज़रें बोल उठीं क्या सच मुच....
फिर मुझे बुरखे में क्यो छिपाया हैं...
क्या डर हैं तुम्हें ....
अब तो तुम स्वतंत्र हो....
तोड़ दो ये धर्म की बेड़ियाँ
नज़र नहीं नज़रिया बदला...
तब भी मैनें कहा......
कुछ नहीं मैं निशब्द थी,
बोलूँ भी क्या,
शब्दों को विस्तृत करना बाकी हैं,
कैसे कह दूँ पीड़ा...
आज भी मैं उस लिवास में
स्वयं को छुपा लेती हूँ...
धर्म की आड़ में, या समाज की ...
नहीं जानती,
केवल आँखे ही नहीं मानती मेरे....
बुरखे को बेड़ियाँ मानकर
विरोध करती रहती हैं उसका।। ....

राम भतेरी
हिंदी विशेष
तृतीय वर्ष

अंध भक्ति और सामाजिक बुराई

राम–रहीम ने डेरा खोला
अंधकार हुई अब खाकी है।
रूबरू सँभलकर रहना यारों
अभी तो बाबा बाकी है।
प्रप्ति, शुगर, बी.पी
है तो मर्ज ख्याली है।
अक्सर होता ठीक यहाँ
खफा एक निराली है।
अंधकार हुई सब रिसर्च
नई दवा निकाली है
माँ–बहनो की इज्जत लूटी''
बाबा 'हनी' नुस्खा बाकी है।
जरा सँभलकर रहना यारो
अभी तो बाबा बाकी है
पाखंडी बाबाओं को मौज उड़ाते देखा
भष्टाचारी नेताओं को बा–इज्जत आते देखा
किस–किस पर उंगली उठाएँ हम
सभी नेता मंत्री दागी हैं
जरा सँभलकर रहना यारों
अभी तो बाबा बाकी है
कभी दामिनी के लिए देश को
दीप जलाते देखा था
आज बालात्कारी बाबा की खातिर
बाहर जलाते देखा है।
शर्म करो ऐ धर्म के रक्षक
अगर कुछ इंसानियत बाकी है।
जरा' सँभलकर रहना यारो
अभी तो बाबा बाकी है।
बच सके तो बचालों यारो
इस अपने परिवार को
ना फिर से याद करेगें
राम–रहीम दरबार को।
बहुत है न्याय कर मिलना
लचकदार कानून मकं
भक्तो से मत पूछो
मिली नहीं अभी माफी है
सँभलकर रहना यारो
अभी तो बाबा बाकी है।
मजहब सब दिल में रखो
सब बाबा बैन करों
सब जाग गए अब
तुम भी जागो न शयन करो
गरीबी–भुखमरी, गरीबी
बहुत समस्या यारो
अभी तो बाबा बाकी है
यह सब सपनें उसके
अंध भक्ति बाकी है
तुमको निडर न्यायालय
मिली तुझे एक पाती है।
लँगड़ा कर दिया डेरा तूने
'हनी' बची अब बाकी है
जरा संभल कर रहना यारो
अभी तो बाबा बाकी है।

रूखसाना खान
हिंदी विशेष
तृतीय वर्ष

जान लो के कौन हो तुम

जब कभी भी यों लगे की कोई तुममें आ रहा,
सोंचना तब ये भी फिर की क्या वहीं सब हो रहा।
देख पाओगे असल तुम अपनी हीं परछाई में,
खोजना उसमें भी पर तुम जो वहीं खो जा रहा।

क्या मिला ? वो जिसमें तुम खंघालते अपनत्व को, या यूहीं फिर वैसे ही कोई फिर तुम्हें झूठला रहा।
तुम ही हो उस चाँदनी में रौशनी में हो तुम्हीं
जिसके हर आलोक से एक पूँज सा टकरा रहा।

देख पाए हो अभी की दूर है वो कल्प से,
या तुम में भी मुझ जैसा हो अंत तक गुँजा रहा।
खोजना तुमको हीं है, जो खुब तुमसे झिप के बैठा लौटकर न आएगा ये पल जो बीता जा रहा।

हर पल में जो होना लिखा वो कर उसे पूरित करो, अन्यथा ये व्यर्थता को ही समेटे जा रहा।
क्या चुका कर पाओगे अभी जो नहीं अविष्कृत हुआ, आएगा ना ये कभी जो ढ़ल के कल बन जा रहा।

अब भी वहीं हो कल जहाँ थे? हम भी तो हर पल वहाँ थे।
खोज पाना भी था मुश्किल अंश जो खोता रहा।

तुम्ही को फिर ऐसे उनमें से निकाला खोजकर
जैसे कोई कल्पना में गीत सा गुँजा रहा।

पूजा राय
बी.ए. हिंदी विशेष
तृतीय वर्ष

रोचक तथ्य

1. आईसलैंड मे पालतू कुत्ता रखना कानून के विरूद्ध है।
2. सबसे पहले हिंदी भाषा में कविता लिखने वाले शख्स थे प्रध्यात कवि 'अमीर खुसरो'।
3. Scientist शब्द पहली बार 1883 में प्रयोग किया गया था।
4. आकाश से गिरी हुई बिजली सूर्य से 5 गुना ज्यादा गर्म होती है।
5. धरती एकलौता ऐसा ग्रह है जिसका नाम किसी देवता के ऊपर नहीं रखा गया और ना ही पुल्लिंग रखा गया है।
6. अगर आप अक्सर म्यूजिक सुनते है तो इससे ब्रेन टयूमर का खतरा कम हो जाता है।
7. एक हफ्ते में कम से कम 5 बार चॉकलेट खाने से करीब 60 प्रतिशत ह्रदय संबंधित बीमारियों से छुटकारा मिलता है।
8. इंसान खाना खाए बिना कई हफ्ते जीवित रह सकता है लेकिन सोए बिना केवल 11 दिन ही रह सकता है।
9. हर साल में दो मिनट ऐसे होते है, जिन्में 61 सैकेंड होते हैं।
10. 'Almost' सबसे लम्बा अग्रेंजी शब्द हैं जिसमें सारे शब्द Alphabets के क्रम मे आते है।

सन्जू कुमारी
बी.ए. हिंदी विशेष
तृतीय वर्ष

मन के हारे हार है... मन के जीते जीत

मन, मन ही तो है जो जहां आ गया बस आ गया मन शरीर का सबसे चंचल और जागरूक अंग है।

मन को सभी इंद्रियों हाथ–पैर, कान–नाक आदि का राजा भी कहा गया है। हम या हमारी इंद्रियों जो कुछ भी करती कहती है, उन्हें करने कहने का विचार या इरादा पहले मन में ही बनता है। सबसे पहले कोई भी काम या ईरादा हो उसे पूरा करने का विचार मन में ही उगता है, उसके बाद, बल्कि उसके बाद ही सारी प्रेरणा से ही अन्य इंद्रियां इच्छित कार्य की ओर झुका करती है। अच्छा बुरा जो कुछ ही हमारे साथ कुछ अच्छा था बुरा भी हो अपने कर्मो का परिणाम मन को ही भोगना पड़ता है। वैसे तो भोगता और सहता शरीर भी है। पर शरीर को भी उसका एहसास मन के कारण ही होता है। इस तरह मन का महत्व एकदम स्पष्ट है।

किसी विचारवान मन वाले व्यक्ति ने जीवन के अनुभवों पर यह ठीक ही कहा है कि 'मन के हारे हार है, मन के जीते जीत। अर्थात व्यक्ति तब तक नहीं हारता जब तक कि उसका मन किसी काम में हार नहीं मान लेता। हो सकता है कि एक दो या चार बार किसी काम में व्यक्ति को असफलता मिली हों, पर इसका मतलब यह तो नहीं है ना कि वो कभी भी सफल नहीं हो पाएगा। यदि वह अपना प्रयत्न यह विचार बनाए रखकर अपना काम निंरतर करता रहता हैं कि मुझें अवश्य सफलता या जीत हासिल करनी है तो कोई कारण नहीं कि उसे सफलता एवं विजय प्राप्त न हो सके। इसलिए विचारवान व्यक्ति हर स्थिति में 'मन बनाए रखने' मन को चंचल या डावाडोल न होने देने की प्रेरणा दिया करते है।

यह सच है कि मन की दृढ़ता अंसभव को भी संभव बना सकती हैं। अघटित को घटा सकती है। ऐसे व्यक्ति भी बहुत कम ही क्या, एक या दो ही मिलते है जो अपने लक्ष्य तक न पहुंच पाकर भी वह मन में यह संतोष लेकर अपने प्राण त्यागा करते है कि उसने अन्त तक पहुचने का प्रयत्न तो किया यह एक बहुत बड़ी उपलब्धि कही जा सकती हैं।

आम जीवन में एक कहावत हैं– जी है, तो जहान हैं। वास्तव में यह कहावत उचित है जिसका जी या मन बुझ जाता है सब प्रकार की सुख–सुविधाएं पाकर भी उसका जीवन उसके खुद के बोझ की तरह हो जाता है। इसके विपरीत जिसका मन दृढ़ रहता हैं, हर हाल में तरो–ताजग़ी का अनुभव कर सकता है वह कठोर से कठोर पलों में भी जी लेता है, एक न एक दिन सफलता भी पा लेता है।

अर्थात् दृंढ़ एवं स्थिर मन वाले वीर सिंहो का ही लक्ष्मी वरण करती है। गीता में श्री कृष्ण ने भी अर्जुन को यही उपदेश दिया था कि मन को कभी बुझने या मरने नहीं देना चाहिए।

सफलता क लिए मन की जिंदादिली आवश्यक है हारा हुआ मन कभी कुछ नहीं कर पाता। जीता हुआ मन ही अतं में सफल हुआ करता है।

अतः मन को हार के निकट तक भी नहीं भटकने देना चाहिए। कहा भी गया हैं।

''जिन्दगी जिन्दादिली का नाम है?
मुर्दा दिल क्या खाक जिया़ करते है''

महिमा लोहिया
बी.ए हिंदी विशेष
तृतीय वर्ष

वार्षिक गतिविधियों की कुछ झलकियाँ

का अंतर्संबंध"
NET | CTET

राष्ट्रीय
के चुनिंदा उत्कृष्ट प्रकाशन
अभियान

कमला नेहरू कॉलेज
तुलसी जयंती
वक्ता : डॉ. विनोद तिवारी

उपलब्धियाँ

रामभतेरी

1.	11.10.2017	जानकी देवी – कॉलेज (वाद–विवाद–प्रतियोगिता) तृतीय वर्ष
2.	20.10.2017	एस.आर.सी.सी. (वाद–विवाद–प्रतियोगिता) प्रतिभागी पुरस्कार
3.	21.03.2018	नाटक में सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन हेतु
4.	15.03.2018	ई.ओ.सी में श्रेष्ठ योगदान हेतु
5.	24.08.2018	अंतः कक्षा वाद–विवाद (प्रोत्साहन)
6.	29.08.2018	अभिनय हेतु

प्रीति

1.	2017–18	ई.ओ.सी. में श्रेष्ठ योगदान हेतु

वंदना

1.	13.03.2018	खो. खो प्रतियोगिता में प्रथम स्थान (अंतर ब्लॉक स्तर प्रतियोगिता)
2.	20.08.2018	खो.खो (प्रतियोगिता में द्वितीय स्थान) राजकीय स्तर पर
3.	20.08.2017	भारतीय महिला क्रिकेट टूर्नामेंट में प्रथम स्थान (एन.सी.जी. क्रिकेट ऐकेडमी द्वारा आयोजित, राज नगर, गाजियाबाद)

कमला नेहरू कॉलेज

दिल्ली विश्वविद्यालय

नई दिल्ली

फोन : 011-2649881